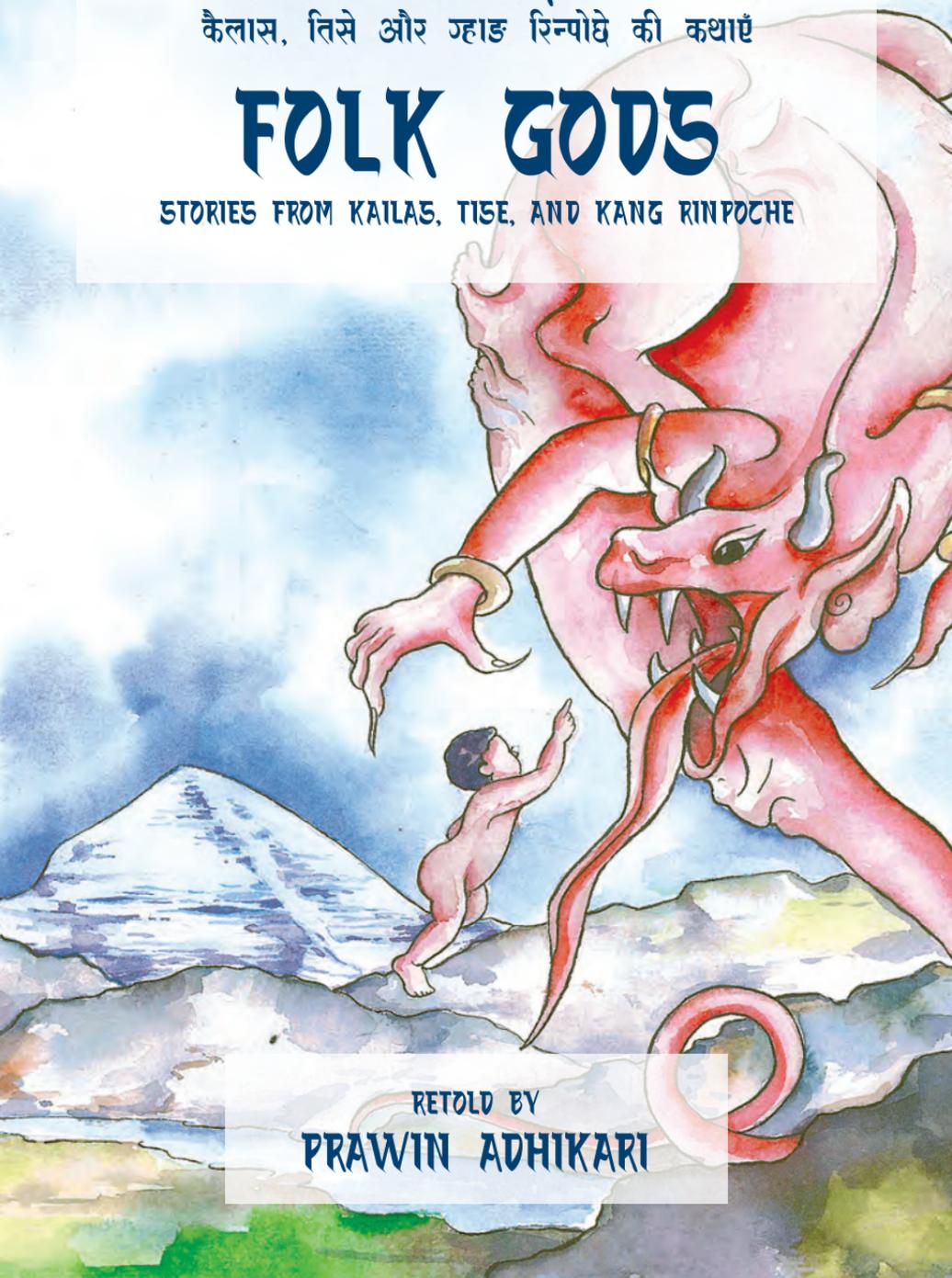


लोक देवता

कैलास, तिसे और जहाड रिन्पोचे की कथाएँ

FOLK GODS

STORIES FROM KAILAS, TISE, AND KANG RINPOCHE



RETOLD BY
PRAWIN ADHIKARI

लोक देवता

कैलास, तिसे और जहाङ्ग रिन्पोछे की कथाएँ

FOLK GODS

STORIES FROM KAILAS, TISE, AND KANG RINPOCHE

RETOLD BY

PRAWIN ADHIKARI

TRANSLATED BY

CHANDRESHA PANDEY

 SAFU

ISBN 978-9937-0-2461-7

Adhikari, P. (2017). *Folk Gods*. Lalitpur, Nepal: Safu.

Published and distributed 2017 by

Safu Publications

Damodar Marg, Lalitpur, Nepal

Tel.: 977-1-5536974

Email: info@qcbookshop.com

www.qcbookshop.com

The publication is available in electronic form at
www.indiachinainstitute.org/sacred-landscapes-book/
and lib.icimod.org/record/32800

Cover and illustrations by Bharat Rai

Layout by Dishebh Raj Shrestha

Hindi translation by Chandresha Pandey

The development of this book was the result of a collaboration undertaken between the India China Institute of The New School and the International Centre for Integrated Mountain Development (ICIMOD) through funds from the India China Institute, The New School, ICIMOD and the Luce Foundation.

Copyright and disclaimer:

All material in this publication is provided under a Creative Commons Attribution BY-NC License <https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/legalcode>. The material here may be quoted, reproduced, or used in any form for education, research, and development purposes without special permission from the India China Institute, the New School or ICIMOD provided acknowledgement of the source is made. No use may be made for resale or other commercial purposes without prior permission in writing from The India China Institute, The New School.

The views and interpretations in this publication are those of the author. They are not attributable to the India China Institute, The New School or ICIMOD and do not imply the expression of any opinion concerning the legal status of any country, territory, city or area of its authorities, or concerning the delimitation of its frontiers or boundaries, or the endorsement of any product.

All material from this publication should be attributed as ©2017 India China Institute, The New School.

Contents

लोक कथाओं के लेखन पर टिप्पणी	1
Note on Folk Story Authorship	3
परिचय	5
Introduction	8
नश्वर देवता	13
Mortal Gods	19
माता की वेदना	26
Mother's Grief	31
भाईयों बीच युद्ध	36
Battle of Brothers	41
सात सुन्दर घोड़े	46
Seven Horses in a Forest	51
राक्षसी का पतन	57
The Fall of the Demoness	62
तीन राजकुमार	68
Three Princes	75
देवभूमि	82
Godsland: Devbhumi	87
चतुर पूर्वज	92
The Clever Ancestor	98
पद्मसंभव और दैत्य शाब्दाग	104
The Hungry Ogre	109
पुचावा सेलजोंग	114
Puchawa Selzong	121

लोक कथाओं के लेखन पर टिप्पणी

कहानियों को लिखना एवं उनका प्रभावशाली रूप से पुनः प्रस्तुतीकरण हमेशा समूहिक प्रयास से ही सम्भव हो पाता है। अलग-अलग व्यक्तियों ने अपनी अद्भुत कथाएँ एवं अमूल्य समय हमारे साथ साझा किया जिसके परिणामस्वरूप इस पुस्तक की रचना हो सकी। तीन वर्षों तक चीन के स्वायत्त प्रांत तिब्बत, नेपाल एवं भारत के हिमालय क्षेत्रों में कठिन खोज व अथक प्रयास के पश्चात इन कहानियों का संकलन किया गया। भिन्न-भिन्न पर्वतीय मार्गों से चलते हुए, समुदाय में तथा स्थानीय व्यक्तियों के घर में बात करके, लामाओं के साथ वार्तालाप करके एवं गाँव के वृद्धों से सुनकर कहानियों को संकलित किया गया एवं हमारे शोधकर्ताओं के साथ साझा किया गया। अपने शोध में कई बार हमें एक ही कहानी के कई रूप देखने को मिले। लेखक प्रवीण अधिकारी ने इन कथाओं को पठन योग्य बनाने के लिए कुछ कहानियों का चुनाव किया एवं उनका सम्पादन एवं पुनःलेखन किया। हम उनका हृदय से आभार व्यक्त करते हैं। प्रमुख रूप से हम स्थानीय ग्रामीण लोगों के प्रति आभार व्यक्त करना चाहते हैं जिन्होंने इन कहानियों को हमारे साथ बाँटा जो कि उनकी संतति के लिए अत्यंत लाभदायक व प्रेरणादायक होगा। यह पुस्तक इन सामूहिक प्रयासों का ही एक सफल परिणाम है। समूह के जिन सदस्यों ने इन कहानियों को संगृहित किया है, उनके विषय में वैयक्तिक रूप से जानकारी प्रस्तावना के आरम्भ में ही दी गई है।

इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद करके चन्द्रेशा पाण्डेय ने इन कहानियों को एक नया रूप प्रदान किया है। हम उन के प्रति आभारी हैं।

Note on Folk Story Authorship

The process of telling and retelling stories is always a group effort. This book would not be possible without many individuals sharing their time and stories with us. These folk stories were collected over the course of three years of exploration in the Himalayan areas of India, Nepal and the Tibet Autonomous Region of China. The stories were shared with our research team in many places—on dirt paths in the mountains; in communal halls around a fire; with locals one-on-one in their homes; and in meeting with lamas, priests, storytellers and village elders. It was often the case that we would hear the same story told in multiple versions. The well-known Nepali writer Prawin Adhikari helped edit a selection of these stories for readability. We are very grateful to him for his help. Most importantly, we would like to express our deep gratitude to the local villagers who shared their stories for the benefit of future generations. What you hold in your hands is the result of this collective effort. More information about the individual team members who collected the stories is included in the Introduction.

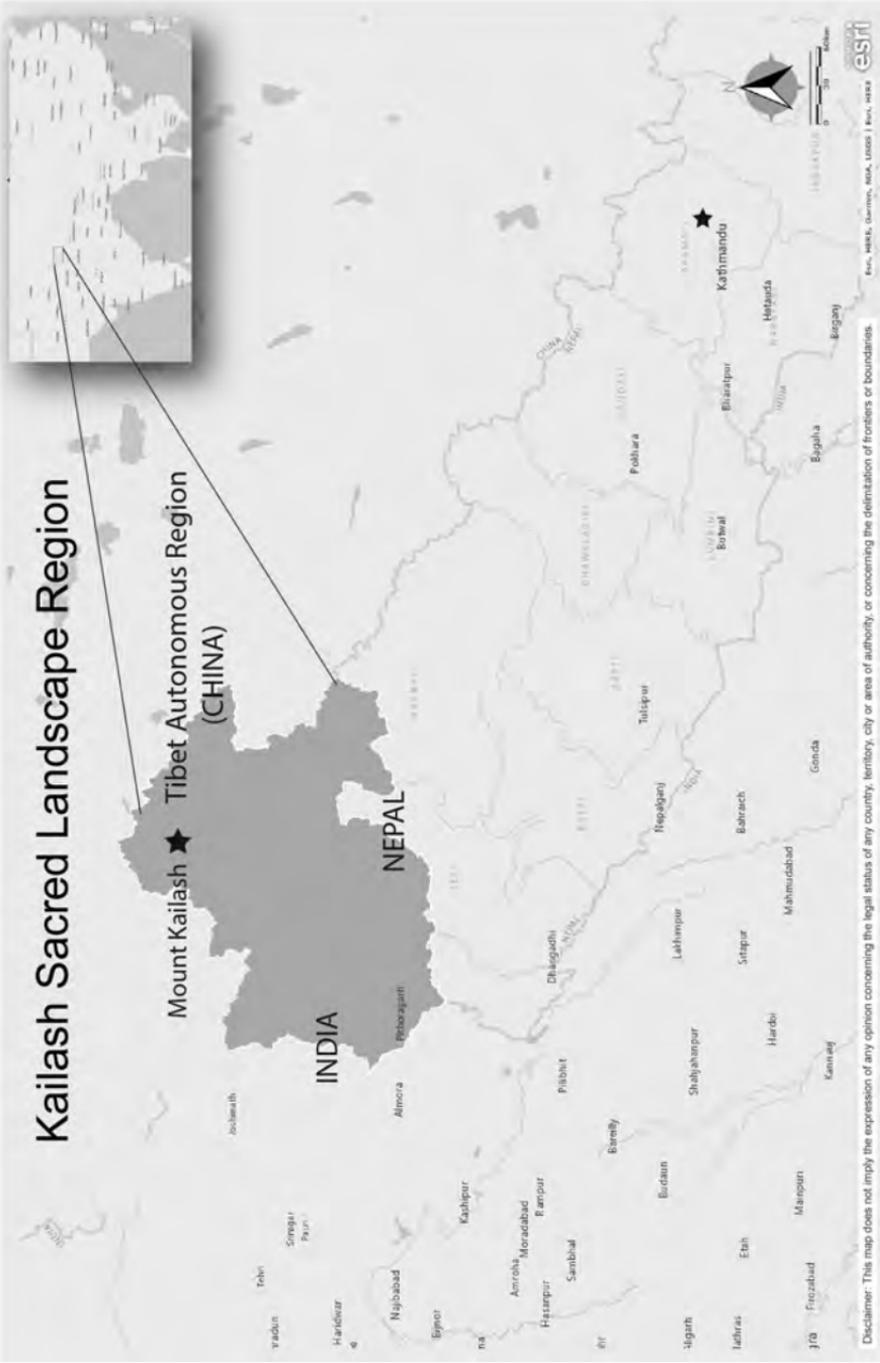
We also would like thank the talented translators who helped make sure these stories would be understandable in each local language: Govinda Adhikari, Jigme, Kelsang Chimee, Kunga Yishe, Ten Phun, Tenzin Sangmo, Bhuchung D Sonam, Dorje, and Chandresha Pandey.

Kailash Sacred Landscape Region

Mount Kailash ★ Tibet Autonomous Region (CHINA)

INDIA

NEPAL



Disclaimer: This map does not imply the expression of any opinion concerning the legal status of any country, territory, city or area of authority, or concerning the delimitation of frontiers or boundaries.



परिचय

हिमालय पर कई प्रकार के पवित्र पर्वत व सरोवर हैं परन्तु इन सब में से सबसे अधिक पावन कैलास पर्वत को माना गया है। जिसे तिब्बत के लोग कांग रिपोचे और कांग तिसे के नाम से पुकारते हैं। हिन्दू, बोनपो, बौद्ध, जैन, सिख, एवं सभी जीववादी कैलास पर्वत को एक पवित्र स्थान मानते हैं। कई धर्मों का यह विश्वास है कि जो व्यक्ति कैलास के सबसे करीब पहुँच पाता है उसके स्वर्ग प्राप्ति के मार्ग खुल जाते हैं।

इन लोक कथाओं का संकलन नेपाल में हुम्ला से, भारत में उत्तराखण्ड से एवं चीन के स्वायत्त प्रान्त तिब्बत से किया गया है जिससे इस बात का पता चलता है कि कैलास क्षेत्र के लोग अपनी जमीन व पूर्वजों के संबंध को भली भांति समझते हैं। कुछ बातों का अन्वेषण किया जा सका है कि: किस प्रकार हम अपनी जन्मभूमि से सम्बंधित हैं? हम अपनी और अपने पूर्वजों की पवित्र बगीचों, झरनों, चोटियों, नदियों व अपनी भूमि की स्मृति से कितना पीछे देख सकते हैं? और, हमारे पूर्वज हमारे लिए क्या सुंदरता, चेतावनी एवं विद्या छोड़ गए हैं?

हजारों वर्षों से कैलास क्षेत्र के आसपास के लोग भिन्न भिन्न राष्ट्रों धर्मों में विभाजित हैं परन्तु फिर भी वे एक की आबो हवा में जीते हैं व एक ही पर्वत व सरोवर की आराधना करते हैं। उनके स्वप्नों में हिमालय की बर्फ की चमक होती है एवं आकाश में उड़ते सारस के स्वरों का कोलाहल होता है।

इन कहानियों के माध्यम से न्यू यार्क के न्यू स्कूल इण्डिया चाइना इन्स्टिट्यूट एवं अंतर्राष्ट्रीय एकीकृत पर्वत विकास केंद्र (इसिमोड) का यह प्रयास है कि इस क्षेत्र के युवा पाठकों को अपनी स्वयं की भूमि, वायु और इन लोक कथाओं पर आधारित कहानियों पर सहकार्य करने के उद्देश्य से आमंत्रित किया जा सके। इस पुस्तक के माध्यम से यह भी प्रयास किया गया कि इन राष्ट्रों के युवा पाठक एवं पूरे विश्व के पाठक यह जान सकें

कि भिन्न भिन्न समुदाय, राष्ट्र एवं ऐतिहासिक कालों के मध्य क्या समानता है और इन सबके साथ इस बात का भी पता लगाया जा सके कि प्रत्येक समुदाय की क्या विशिष्ट धरोहर है ।

इस पुस्तक में न्यू यॉर्क के न्यू स्कूल में इण्डिया चाइना इन्स्टिट्यूट द्वारा रूपरेखा रखी गई तीन वर्षिय परियोजना को भी उजागर किया गया है । हेनरी ल्यूक फाउंडेशन और इसिमोड ने न्यू स्कूल को अतिरिक्त प्रारंभिक सहायता द्वारा प्रदान की । मैं सभी सहयोगियों को उनकी भागीदारी एवं सहयोग के लिए धन्यवाद देता हूँ । विशेष रूप से सागर लामा, हिमानी उपाध्याय, गेसांगछिमि (चिमी), गेंग गए यी सी (कुंगा), पासंग यांग्जी शेर्पा, शीतल ऐतवाल, नवराज लामा, शेखर पाठक, छेवांग लामा (छक्क बहादुर) का आभारी हूँ जिन्होंने विभिन्न प्रांतों से कहानियों को एकत्रित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । हम इसिमोड से अभिमन्यू पाण्डेय, राजन कोत्रु एवं स्वप्निल चौधरी के अथक सहयोग व भागीदारी के लिए आभारी हैं और हम विशेष रूप से ल्यूक फाउंडेशन के टोबी वाकमैन का धन्यवाद करना चाहते हैं जिन्होंने निरंतर इतने वर्षों से अपना सहयोग व प्रोत्साहन हमें दिया ।

पासांग यांग्जी शेर्पा, सागर लामा, शीतल ऐतवाल एवं छेवांग लामा (छक्क बहादुर) ने हुम्ला और दार्चुला जिले की कहानियों का सांकलन किया एवं उनका पुनः कथन किया । हिमानी उपाध्याय ने शेखर पाठक के मार्गदर्शन एवं उनकी सहायता से भारत के उत्तराखंड में पिथौरागढ़ जिले से कहानियों का संकलन किया । गेसांगछिमि (चिमी) ने गेंग गए यी सी (कुंगा), की सहभागिता से तिब्बत के स्वायत्त न्गारी प्रान्त की कहानियों का संकलन किया ।

शोध करने वाले सहयोगियों को इन कहानियों का संकलन एवं उनका अनुवाद करने लिए कभी पैदल यात्रा करनी पड़ी तो कभी कथाओं की खोज में सड़कों पर लम्बा सफर तय करना पड़ा । बाद में प्रवीण अधिकारी ने इन कहानियों का वर्तमान शब्द रूप में अंग्रेजी भाषा में विस्तार किया । चन्द्रेश पाण्डे ने इनका हिन्दि अनुवाद किया । समाज की बहुरूपता, रीति रिवाज एवं धर्म जहाँ से इन कथाओं को एकत्रित किया गया है, उसे उजागर करने के उद्देश्य से इन कहानियों को चार द्विभाषिक पुस्तकों में प्रकाशित किया गया है । जिनमे अंग्रेजी के साथ साथ मैडरिन भाषा, हिंदी, नेपाली और तिब्बती भाषा शामिल हैं ।

अधिकतर कहानियाँ और अतिरिक्त सामान जैसे कि चित्र, नक्शे, श्रव्य रेकर्ड्स एवं अन्य सम्बंधित जानकारियाँ इण्डिया चाइना इन्स्टिट्यूट और इसिमोड के वेब साइट पर सार्वजनिक रूप से उपलब्ध है जो कि ल्यूक फाउंडेशन द्वारा निधिबद्ध तीन वर्ष के कार्यक्रम पवित्र हिमालय पहल का

हिस्सा है जिसमें हिमालय के धर्म, प्रकृति एवं उसकी संस्कृति को जानने का प्रयास किया जाता है। प्रत्येक भाषा के इलेक्ट्रॉनिक अनुवाद को किसी भी प्रकार के निजी व शिक्षा संबंधी प्रयोग के लिए आई सी आई वेब साइट से www.indiachinainstitute.org/sacred-landscapes-book/ अथवा इसिमोड की वेब साइट lib.icimod.org/record/32800 से बिना किसी शुल्क के डाउनलोड किया जा सकता है।

अशोक गुरूड

वरिष्ठ निर्देशक, इण्डिया चाइना इन्स्टिट्यूट

प्रोफ़ेसर ऑफ़ प्रैक्टिस,

जुलियन जे. स्टडली ग्रेजुएट प्रोग्राम इन इंटरनेशनल अफेयर्स,

दी न्यू स्कूल, न्यू यॉर्क

Introduction

There are many sacred mountains and lakes in the Himalayas, but the most famous amongst them is Mount Kailas. It is also called Kang Rinpoche or Kang Tise by the people of Tibet. Hindus, Bönpos, Buddhists, Jains, Sikhs, and animists all consider Kailas a sacred place. Many religions believe Mount Kailas to be the closest humans can get to the heavens.

This collection of folktales from Humla in Nepal, Uttarakhand in India, and the Tibet Autonomous Region in China explores the ways in which people from the Kailas region have understood their relation to their land and ancestors. Some of the questions these stories explore are: How are we related to the land where we grow up? What do we and our ancestors, going as far back as memory or imagination can reach, share with the sacred groves, lakes, peaks and rivers of our land? And, what beauty, warnings or wisdom have our ancestors left behind for us?

For thousands of years, people of the land around Kailas have been divided into different nations and religions, but they still share the same air and waters, and still worship the same lakes and mountains. Their dreams have the brilliance of Himalayan snow and the clamour of cranes in the skies. Through these stories, the India China Institute at The New School in New York and the International Centre

for Integrated Mountain Development (ICIMOD) hope to reach young readers from the region and invite them to once more reflect on their own land, air and stories as found in these folktales. This book seeks to remind young readers in these countries – and readers all around the world – to recognize what is common across communities, nations and periods in history, while also recognizing what the unique inheritance of every community is.

This book emerged out of a three-year project designed and led by the India China Institute at The New School in New York City. In addition to contributions from The New School, primary support for the project came from the Henry Luce Foundation and ICIMOD. I want to use this opportunity to thank all of our supporters for their partnerships and generous contributions. Also, a very special thanks to our fieldwork team: Sagar Lama, Himani Upadhyaya, Kelsang Chimee, Kunga Yishe, Pasang Y. Sherpa, Sheetal Aitwal, Nabraj Lama, Shekhar Pathak, and Tshewang Lama (Chakka Bahadur) – for their crucial role in gathering stories from the region. We also thank Abhimanyu Pandey, Rajan Kotru and Swapnil Chaudhary of ICIMOD for their tireless support and participation in the project. And my special thanks to Toby Volkman of Luce Foundation for their continued support and encouragement over the years.

Pasang Sherpa, Sagar Lama, Sheetal Aitwal and Tshewang Lama (Chakka Bahadur) collected and retold stories from Humla and Darchula districts in Nepal. Himani Upadhyaya collected stories from the Pithoragarh district of Uttarakhand state in India, with the support and guidance of Shekhar Pathak. Kelsang Chimee collected stories in the Ngari Prefecture of Tibet Autonomous Region in China, with participation from Kunga Yishe. The research associates collected and translated these stories from many

different sources, traveling by road and by foot in search of interesting tales. Later, Prawin Adhikari expanded them into their present form in English. Govinda Adhikari translated the stories into Nepali. Thanks to Tenzin Norbu Nangsal for editing the Tibetan, Liu Xiaoqing for editing the Chinese, and Shekhar Pathak for editing the Hindi. To reflect the great diversity of societies, cultures and religions from where these folktales were collected, the stories have been published as four bilingual books, with stories in English, alongside translations in Mandarin, Hindi, Nepali, and Tibetan.

Additional stories and materials, including photographs, maps, audio recordings and other related information, are publicly available on the India China Institute's website as part of its Sacred Himalaya Initiative, a three-year Luce Foundation-funded project exploring religion, nature and culture in the Himalayas. Electronic versions of each language may be downloaded free of cost for personal or educational use from the ICI website at: www.indiachinainstitute.org/sacred-landscapes-book/ and from ICIMOD's website at: lib.icimod.org/record/32800.

Ashok Gurung

Senior Director, India China Institute, and Professor of Practice, Julien J. Studley Graduate Program in International Affairs, The New School

नश्वर देवता

बहुत समय पहले की बात है जब विभिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों में देवता एवं राक्षस दोनों ही सामान्य लोगों के बीच रहा करते थे। काफी समय पहले उस युग में एक हिमालय के देवता थे जिनके पाँच युवा एवं बलवान पुत्र थे। सबसे छोटे पुत्र का नाम पिपिह्या था जिसका अर्थ होता है 'वह व्यक्ति जिसके चार बड़े भाई हों'।

उन पाँचों भाईयों में आपस में बहुत प्रेम था और उन्हें कहीं भी जाना होता तो वे हमेशा साथ में ही जाते। कभी वे हिमालय की पहाड़ियों में नीले रंग वाली भेड़ का तिब्बत के घास के मैदानों तक पीछा किया करते थे तो कभी गंगा के बर्फीले पानी में और हुम्ला की केर्मी के गरम पानी में स्नान किया करते। उन सभी के पास उड़ने वाला रथ था अतः वे दूर-दूर के क्षेत्रों में भ्रमण किया करते थे। उन्होंने बसंत ऋतु के समय लॉगर सो के द्वीपों पर पक्षियों के द्वारा बनाए हुए घोंसलों को देखा। लीमी घाटी में उन्होंने बर्फीले तेंदुओं को देखा। नीचे की ओर स्थित ब्यांस घाटी के सरसों के खेतों में नृत्य करने के लिए वे गड़रिए का वेश धारण करके जाते थे।

एक दिन गढ़वाल में स्थित पुष्पो की घाटी में जब वे गेंदाफूल एवं खसखस के मुकुट बना रहे थे तभी उन्हें एक सम्मोहक गीत सुनाई दिया।

पिपिह्या ने बड़े भाईयों से कहा, 'हम सभी देव हैं, परंतु यदि मुझे इस गीत को गाने वाला दिखाई नहीं दिया तो मैं मर जाऊँगा।'

उसके भाईयों ने उसे सावधान करते हुए कहा, 'पिपिह्या कुछ कामनाएँ ऐसी होती हैं जो सिर्फ जन्म लेने वाले व मृत्यु को प्राप्त होने वाले मनुष्य ही कर सकते हैं। हमारे लिए युवावस्था शाश्वत है और यदि हम दुखी बने रहेंगे तो हमारी तृष्णाएँ भी इसी प्रकार अनंत ही बनी रहेंगी।'

परंतु पिपिह्या उन गायकों को ढूँढने के लिए हठ करता रहा। उसके बड़े भाईयों ने कहा, 'अच्छा ठीक है पिपिह्या, परंतु हम सबको एक प्रतिज्ञा करनी होगी कि हम मनुष्यों द्वारा भेंट में दिया गया कुछ भी नहीं खाएँगे। यदि हमारे मुख में चावल का एक दाना भी गया तो हम सदा के लिए पृथ्वी लोक में ही फँस जाएँगे।'



रात भर अपने रथों पर उड़ते हुए उन्होंने कुछ खोजबीन की और उन्हें ब्यांस घाटी में उन गायकों का पता चल गया जहाँ पर अभी भी रंग जाति के लोग रहा करते थे। रंगलिन देव की पाँच पुत्रियाँ थीं जो पूरे विश्व में सबसे सुंदर थीं। पिपिह्या एवं उसके भाईयों ने उन युवतियों को स्वयं का परिचय दिया और तत्काल ही उनसे मित्रता कर ली।

रंगलिंग देव ने अपनी पुत्रियों के लिए एक शानदार एवं मनोरंजक महल बनवाया हुआ था जहाँ से वे सारी बहिनें उत्तर पूर्व में स्थित साइपाल पर्वत के दर्शन कर सकती थीं एवं नीचे की ओर घाटी में बहने वाली महाकाली नदी को बहते हुए देख सकती थीं। वहाँ पर वे युवा देवता व नव युवतियाँ लाल रंग के मखमल से आवृत बिस्तरों पर शतरंज खेलते थे और नर्म घास पर नग्न पाँवों से नृत्य करते हुए पूरी रात हँसते हुए व बातें करते हुए बिताते थे। जब भी वे नवयुवतियाँ नृत्य करती थीं तब देवता उनके लिए बाँसुरी और ढोल बजाते थे एवं जब भी वे सुंदर बहिनें उन देवताओं से निवेदन करती तो वे देवता उनके समक्ष प्रसन्नता पूर्वक नृत्य करते। परंतु पिपिह्या और उसके भाई सदा ही उसके द्वारा दिया हुआ भोजन ग्रहण ना करने के लिए कोई ना कोई बहाना बनाते और सूर्योदय से पहले ही वे सभी उस मनोरंजक महल से चले जाते।

कई दिनों की इस आनन्दमयी मित्रता के पश्चात उन बहिनों को यह आभास हुआ कि वे जो भी भोजन अपने आगंतुकों के समक्ष प्रस्तुत करती थीं वे उसे छुए बिना ही वहाँ से चले जाते थे। वे बहिनें आपस में विचार-विमर्श करने लगी, 'युवकों के डील-डौल व सुंदर चेहरों से यह साफ लगता है कि वे सभी भाई देवता हैं, शायद उन्हें लगता है कि हमारा भोजन उनके लिए अशुद्ध है।' तब उन्होंने निश्चय किया कि वे चावल के प्रत्येक दाने को अपने स्वयं के हाथों से छीलेंगी और स्वयं अपने हाथों से चावल का हलवा बनाएँगी। वे एक-दूसरे से कहने लगी, 'ऐसा कौन मित्र होगा जो इतने प्रेम व स्नेह से बनाए हुए भोजन को ग्रहण करने से मना करेगा?'

पूरा दिन उन बहिनों ने चावल के दानों को छीलते हुए बिता दिया। बीच-बीच में काम की वजह से उत्पन्न हुई ऊब को मिटाने के लिए उन्होंने गीत भी गाए। वे यह सोच-सोच कर बहुत प्रसन्न हो रही थीं कि यह स्वादिष्ट हलवा उन देवों के चेहरों पर मुस्कुराहट ले आएगा। शुद्ध चावल को शुद्ध दूध में उबाल कर उसमें केरल व कश्मीर के बेहतरीन मसालों को मिलाकर उन बहिनों ने चावल एवं दूध के मिश्रण से बनी खीर के पाँच बड़े कटोरे तैयार किए।

सूर्यास्त के पश्चात वे देवता आए। सुंदर युवतियों ने उन देवों से बेहतरीन ऊन के बने कालीन पर बैठ जाने का निवेदन किया और याक चँवर से हवा करने लगी तत्पश्चात उनके समक्ष खीर से भरे कटोरे रखे।

जब भाईयों ने खीर से भरे कटोरों को देखा तो उनमें से सबसे बड़े भाई ने अपने शेष भाईयों को आँख मार कर व सिर हिलाते हुए चावल के एक भी दाने को मुँह में लिए बिना खीर खाने का बहाना करने का संकेत दिया। पवित्र देवों को अपवित्र मानवों से पृथक करने का यह एक सख्त नियम था। इन नियमों को तोड़ना प्रकृति के सृजनकार की बनायी हुई सीमाओं को लौंघने के बराबर था। बड़े भाई द्वारा दिया गया संकेत सभी को समझ आ गया था अतः वे हँसते हुए व भोजन की सराहना करते हुए खीर खाने का ढोंग करने लगे। एक भाई ने कहा, 'ओह ! इलायची की गंध बहुत बढ़िया है, ' दूसरे भाई ने समर्थन में कहा, 'और केसर की सुगंध भी एकदम मनमोहक है।'

सभी देवता खीर को अपने होठों तक लाने का ढोंग तो करते परंतु बड़ी चालाकी के साथ उसे अपने कंधों के ऊपर फेंक देते। वे बहुत जोर-जोर से हँसते हुए खीर की प्रशंसा कर रहे थे तभी चावल का एक दाना छटक कर कंधे की बजाय पिपिह्या के मुख के अंदर चला गया।

रात के गुजरने के साथ ही सभी देवता और वे पाँच बहिनें आपस में रहस्यमयी बातें फुसफुसाने लगी और वे एक दूसरे की कमर के इर्द-गिर्द बाहें डाल कर नृत्य करने लगे। वे जाँचने लगे कि कौन सबसे लम्बे समय तक मोर पंख से की हुई गुदगुदी सहन कर सकता है। जब तक भोर की देवी ने पूर्व दिशा को लाल रंग से ना रंग दिया तब तक वे सभी मस्तिष्क एवं काया के खेल खेलते रहे। सभी देवों ने साँझ में वापस आने का वादा किया और मृदुता से उन बहिनों के प्रेमालिंगन से अपने को दूर करके अपने-अपने रथों पर चढ़ गए।

चाँदी व स्वर्ण से बने पाँचों रथ उस मनोरंजक महल से उड़ गए एवं उन पाँचों बहिनों ने विदाई के समय रेशमी लटकन वाले दुपट्टों को लहराया। परंतु शीघ्र ही पिपिह्या का रथ धीरे-धीरे नीचे की ओर उतरने लगा जैसे कि मानो कोई अदृश्य बल उसे नीचे की ओर खींच रहा हो। बड़े भाईयों ने यह दृश्य देखा और वे भयभीत हो उठे। अंत में जब वह रथ सिखा जा उतरा तब बड़े भाईयों ने बादलों के पार से उससे बात की।

'पिपिह्या ! तुमने मनुष्यों के हाथ का भोजन खा लिया है अतः अब तुम्हें इसका दंड भुगतना पड़ेगा। तुम अब राजा की तरह वही रहो, तुम्हारी आवश्यकता की सभी चीजें हम तुम्हें भेजते रहेंगे।'

अपने भाईयों की बातों को मानते हुए पिपिह्या वही रूक गया और सिखा के पहाड़ी ढलान वाले क्षेत्र में अपने लिए एक भव्य महल का निर्माण किया जिसमें रथ को आँगन के बीचोंबीच रखा गया था।

अटारह मंजिल ऊँचा महल पूरे विश्व भर में सबसे आलीशान महल था। उसके भाईयों ने राज मिस्त्रियों व काष्ठकर्मियों, जुलाहों व कुम्हारों एवं बड़े महल के निर्माण में उपयोगी हर प्रकार के कारीगर को किराए पर

रखने के लिए उसे धनराशि प्रदान की। पिपिह्या ने एक प्रशिक्षित सेना भी बनायी। अब उसने मानवों वाला भोजन खाना प्रारम्भ कर दिया था। अब जब वह धरती पर अटक ही गया था तो उसे आनंदपूर्वक पृथ्वी पर वास करना ही चाहिए।

परंतु उसकी सम्पत्ति इतनी अधिक हो गयी थी कि किले की खिड़कियाँ व छतें बोझ से गिरने लगी थीं। पिपिह्या ने अपनी संपत्ति का वितरण सेना, निर्धन किसान व ब्यांस घाटी के गड़रिए, गाय चराने वाले व दर्जी, उसके बावर्ची व सफाईकर्मी के बीच करने का निर्णय लिया। उसने सड़कें बनवायी, पुल बनवाए, एवं तिब्बत के साथ आसान व तीव्रतर व्यापार के लिए धर्मशालाएँ बनवायीं। पहाड़ों की जड़ी-बूटी की पहचान, उसका प्रशोधन व उसको संचित करने की विधि आदि के लिए गाँव के नर-नारी को प्रशिक्षित किया ताकि वे बीमारों का उपचार कर सकें एवं इससे रोजगार भी पा सकें।

परंतु पिपिह्या का पृथ्वी पर समय उसके आसपास रहने वाले लोगों के समय से भिन्न प्रकार की गति से बीत रहा था। वह उन पाँचों बहिनों से मिलने जाता था। अब वे बड़ी हो चुकी थीं एवं कई वर्षों पश्चात मृत्यु को प्राप्त हो गयी। उसके आँगन के मध्य में रखा रथ भी जंग लगकर टूटने लगा था। उसके सेवकों के वंशज भी नयी ऊर्जा व नए उत्साह के साथ उसकी सेवा में शामिल होते, फिर वे मोटे होते, तत्पश्चात उनका शरीर झुकने लगता और अंत में उनकी मृत्यु हो जाती। इस जन्म से मरण की यात्रा ने पिपिह्या को सुखी व मनोरंजक स्थिति से परे कर दिया था और अब वह भी संसार से मुक्ति की अभिलाषा करने लगा था।

एक दिन जब उसकी सेविका उसके लिए अंगूर छील रही थी तब वह सिसकते हुए बोलने लगा, 'काश मेरे भाई स्वर्ग से आएँ और मुझे लेकर चले जाएँ ! मैं अब इस सुख-सम्पत्ति से ऊब चुका हूँ क्योंकि यह मुझे यहाँ बांधे रखना चाहती है।' पिपिह्या की सेविका अपने स्वामी के लिए अंगूर छीलते-छीलते इतनी बूढ़ी हो चुकी थी कि वह उसकी याचना सुन ही नहीं पायी। आखिर उसने कभी भी अपने मालिक से शिकायत नहीं की थी कि कैसे एक-एक अंगूर को छीलने से उसकी आँखें तनावपूर्ण हो गयी थीं और उसकी अंगुलियों में गठिया हो गया था।

'यदि आप अपनी सम्पन्नता और सुंदरता से इतने ही व्याकुल हैं तो आप अपने पूर्वजों को प्रदान किए जाने वाला ढाल आटे के बदले राख से क्यों नहीं बनवाते और वार्षिक श्राद्ध के लिए बकरे की बजाय कुत्ते की बलि क्यों नहीं करते?'

समाज के कुछ नियम बहुत साफ तरीके से प्रतिष्ठित हैं जिसका सभी लोगों को ज्ञान है। जिनमें से कुछ तो ऐसे हैं जो कि सब लोगों को सिर्फ

मालूम ही नहीं है अपितु जिनके तोड़ने पर वे दंड के भी भागी हो सकते हैं। कुछ नियम अज्ञानतावश टूट जाते हैं परंतु कभी-कभी स्वयं देवता ही समाज में परिवर्तन लाने के लिए जान-बूझ के नियमों का उल्लंघन करते हैं। पिपिह्या ने अपने विश्वसनीय लोगों को अपने पास बुलवाया और बोला, 'मैं अपने भाग्य को पूर्णरूप से नष्ट करने जा रहा हूँ।'

धन व शक्ति के नाश की सम्भावना से भयभीत पिपिह्या के मंत्री व सैनिकों ने कहा, 'नहीं ! यह हम सबके लिए बहुत बुरा होगा।' परंतु किसी की भी ना सुनते हुए उसने आटे के बदले राख की ढाल बनवायी और पूर्वजों को बकरे की बजाय कुत्ता अर्पण किया। यह बहुत ही अपमानजनक बात थी। समाज के आधारभूत नियमों को तोड़ने के बाद कोई भी सुख व सम्पत्ति का अधिकारी नहीं हो सकता। अतः पिपिह्या की पूँजी घटने लगी। उसके रथ में शेष बचे स्वर्ण, चाँदी व जंग को चोर चुरा कर ले गए। अंततः उसका किला भी ध्वस्त हो गया एवं उसे लोगों द्वारा फेंकी गयी जूठन खाकर रहना पड़ा।

पिपिह्या के पास अब सिर्फ एक लकड़ी का कटोरा शेष रह गया था।

पिपिह्या का वैभव एवं उसकी सुंदरता सब गायब हो गयी थी। जब वह चावल चबा रहा था तो उसका एक दाँत टूट के गिर पड़ा। तत्काल ही वह पागलों की तरह हँसने लगा।

स्वर्ग की ओर देखते हुए उसने कहा, 'भाईयों ! क्या तुम मुझे भूल गए हो?'

तभी उसके भाई अपने शानदार स्वर्ण व चाँदी के रथों पर सवार होकर आए और उसे जमीन से उठाते हुए आकाश की ओर खींचा। उस दिन के बाद किसी ने भी उसे नहीं देखा। अंततः पिपिह्या उस एक चावल के दाने को खाने के अपराध से क्षमा कर दिया गया था।

जब उसका किला भव्य एवं सम्पन्न था तब पाँच सौ रंग व्यापारियों एवं किसानों के परिवार किले की पश्चिम दिशा की ओर आकर बस गए थे। पूर्व में तीन सौ लुहारों के परिवार जिन्होंने किले व उसके सैनिकों की सेवा की, आकर बस गए थे परंतु पिपिह्या द्वारा अपने पूर्वजों को अर्पित किए गए राख के ढाल व कुत्ते की बलि की वजह से लोगों को लगता था कि यह स्थान अब कभी फिर से सम्पन्न नहीं हो पाएगा। अतः वे हमेशा के लिए वहाँ से चले गए।

जो पर्यटक सिखा की यात्रा पर जाते हैं वे आज भी पहाड़ी के टूटे-फूटे भागों को देख सकते हैं। ये खंडहर किसी देवता द्वारा नियम तोड़े जाने के फलस्वरूप होने वाले परिणामों के ही सूचक हैं।

Mortal Gods

Many cultures and religions imagine a time very long ago when gods and demons lived among the people. In such an age, a god in the Himalayas had five young and strong sons. The youngest was called Pipihya, and his name meant ‘one who has four older brothers’.

The five brothers loved each other and went everywhere together. They chased blue sheep over the Himalayas into the meadows of Tibet. They bathed in the glacial waters of the Ganga and in the hot-water springs of Kermi, in Humla. Each of them had a flying chariot, so they traveled widely. On the islands in the Langar Tsho they watched birds build nests in the spring. In the Limi Valley they watched snow leopards. Disguised as shepherds they traveled down to the Byans Valley to dance in the mustard fields.

One day, when they were making crowns of marigolds and poppies in the Valley of Flowers in Garhwal, they heard an enchanting song.

‘Brothers,’ Pipihya said to his elders, ‘we may be gods, but I will die if I don’t see who sings this song!’

‘Pipihya,’ his brothers warned, ‘some kinds of desires are only for humans who live and die. For us, youth is eternal, and so will longing be if we are made unhappy.’

But Pipihya insisted upon finding the singers. His eldest brother said, ‘Alright, Pipihya. But we must all promise never



to eat anything the humans offer us. If even a grain of rice goes into our mouths, we will be trapped on earth forever.’

After a short search on their flying chariots they found the singers in the Byans Valley, where the Rung people still live. The five daughters of Lord Runglin were the most beautiful in the world. Pipihya and his brothers introduced themselves and immediately befriended them.

Lord Runglin had built a pleasure palace for his daughters. From there, the sisters could see the Saipal Mountain to the north-east, and the Mahakali flowed in the valley beneath it. There, the gods and the young women played chess on beds covered in red velvet and danced barefoot on soft grass and spent the entire night laughing and talking. The gods played flutes and drums while the young women danced. When the sisters asked, the gods happily danced for the young women. Pipihya and his brothers always made excuses to avoid eating any food that was offered to them. And they left the pleasure palace before sunrise.

After a few days of blissful friendship, the sisters noticed that all the food they laid out for their guests was left untouched. ‘From their stature and beauty it is clear that the brothers are gods. Maybe they think our food is impure,’ the sisters said. They decided to peel with their own hands every grain of rice, and to make rice pudding themselves. They wondered – ‘What kind of a friend would refuse to eat something made with so much affection?’

The sisters spent the entire day peeling rice grains. They sang to chase away the boredom of the work. But they were also happy because they knew the pudding would make the gods smile. After boiling the pure rice in pure milk with the finest spices from Kerala and Kashmir, the sisters prepared five big bowls of *kebeer*, milk-and-rice pudding.

The gods arrived in the evening. The sisters asked them to sit on rugs made of the finest wools, fanned them with yak-tails, and put bowls of pudding before them.

With a wink and a nod, the oldest of the brothers signaled to the others to pretend to eat the pudding but never let a single grain of rice into their mouths. This was a strict rule that separated the pure gods from the impure humans. To break this rule was to defy Creation itself. His brothers understood the signal, so they laughed and praised the pudding. ‘Oh, the cardamom smells beautiful!’ one said. ‘Surely the fragrance of saffron is more enticing!’ another added.

The gods pretended to take the pudding to their lips, but cleverly threw it over their shoulders. But as he was loudly laughing and praising the pudding, a grain of rice went into Pipihya’s mouth.

As the night passed, the gods and the sisters whispered secrets to each other and danced with arms around each other’s waists. They tested who could resist the tickle of a peacock feather the longest. They played games of the mind and of the body, until the goddess of dawn painted the eastern skies red. The gods promised to return in the evening, gently peeled away from the embrace of the sisters, and mounted their chariots.

Five chariots of gold and silver flew up from the pleasure palace as the five sisters waved silk-tasseled shawls in goodbye. But Pipihya’s chariot soon began descending slowly, as if an invisible burden pulled him back to earth. His brothers saw that and worried. When the chariot finally settled at Sirkha, they spoke to him from beyond the clouds.

‘Pipihya! You have eaten human food, and now you must endure your punishment. Settle here, and live like a king. We will send you everything you need.’

Pipihya agreed with his brothers and built himself a great fort on the Sirkha hillside with the chariot in the middle of the courtyard where he had fallen. The eighteen-story fort was the most magnificent building in the whole world. His brothers sent him the wealth needed to hire masons and carpenters, weavers and potters, and every kind of worker needed for a large fort. Pipihya also hired and trained an army. He began eating mortal food. After all, he was stuck on earth. Why shouldn't he enjoy his time here?

But he had so much wealth that it spilt out of the windows and roofs of the fort. Pipihya used his army to distribute his wealth among the poor farmers and shepherds of the Byans Valley, and to his cooks and cleaners and cowherds and tailors. He built roads, bridges and rest-houses to make trade with Tibet easier and faster. He trained young men and women to recognize, process and store the herbs in the mountains so that they could heal the sick and also earn a living.

Time passed at a different pace for Pipihya than it did for the humans around him. He visited the five sisters as they grew older and finally died. The chariot in his courtyard rusted and broke. Generations of servants joined his service with energy and enthusiasm, then grew thick around the waist, then stooped and squinted, and finally died. This journey from birth to death stopped amusing Pipihya and he, too, began desiring liberation.

'If only my brothers would come from heaven and take me away! I am tired of all this wealth and prosperity because it keeps me here,' he moaned one day as a maid peeled grapes for him. This maid had grown old peeling grapes for Pipihya and was tired of hearing him complain. After all, she didn't get to complain about how peeling grapes strained her eyes or gave her arthritis in her fingers.

‘If you are so tired of being rich and beautiful, why don’t you offer your ancestors a shield made of ashes instead of flour and a dog instead of a goat for the yearly feast?’ the old woman said.

Some rules of society and religion are very clearly established and most people know them. Some rules are not clearly known by everybody, but they still bring punishment if broken. Some rules are broken unknowingly. But sometimes even gods knowingly break society’s rules to invite change. Pipihya called the people he trusted and said, ‘I am going to destroy my fortune.’

‘No! That would be bad for us,’ said his ministers and commanders, fearing the loss of wealth and power. But Pipihya made a shield of ashes instead of flour and chose a dog instead of a goat to offer to his ancestors. This was terribly insulting. That misfortune soon befell Pipihya should surprise nobody. His wealth decreased. Thieves stole what was left of his chariot of gold, silver and rust. Finally, a day came when his fort lay in ruins, and he had to eat scraps thrown to him by strangers.

Pipihya only had a wooden bowl to eat out of. All splendor and beauty disappeared. When a tooth fell off while he was chewing rice, he laughed like a mad man and rolled in the dirt.

‘Brothers! Have you forsaken me?’ he said to the heavens.

His brothers appeared on their magnificent chariots of gold and silver and picked him up from the dirt and pulled him into the skies. Pipihya had finally been forgiven for eating one grain of rice. Nobody has heard from him since that day.

When the fort was great and prosperous, five hundred Rung families of traders and farmers had settled to the west of the fort. To the east lived three hundred families

of blacksmiths who served the fort and its armies. But after Pipihya offered a shield of ashes along with a dog to the ancestors, the people knew that the land would never see wealth again. They left, never to return.

Tourists who visit Sirkha today can see the ruins on the hill. These ruins are a reminder of what happened when a god broke a simple rule.

माता की वेदना

पूरी दुनिया के लोग किसी न किसी प्रकार की पावन एवं पवित्र वस्तु, मंदिर, पहाड़ एवं नदियों की परिक्रमा करते हैं। यह सृष्टि के रचयिता की आराधना एवं उसका सत्कार करने का एक प्राचीन तरीका है। तिब्बती भाषा में किसी स्तूप, मूर्ति, नदी और पर्वत के परिक्रमा को कोरा कहा जाता है।

तिब्बत के स्वायत्त प्रांत के न्गारी अंचल में खांग रिपोचे नाम का पवित्र पर्वत स्थित है जो कि किसी भी व्यक्ति की स्मृति से कहीं पुराना पवित्र स्थल है। विभिन्न धर्मों को मानने वाले इस पर्वत की परिक्रमा करने के लिए यहाँ की यात्रा करते हैं जिसे कैलास और मेरु पर्वत के नाम से भी जाना जाता है। यह पावन पर्वत हिंदुओं, बौद्धों, सिक्खों, जैनियों, बोनपो और भी कई धार्मिक परम्परा को मनाने वाले लोगों के लिए समान रूप से आदरणीय है। बोन लोग यह कोरा घड़ी की सुई की विपरीत दिशा में करते हैं जबकि बाकी लोग घड़ी की सुई की दिशा में करते हैं। बौद्धों की यह मान्यता है कि खांग रिपोचे के तेरह कोरा करने से अधिक पुण्य प्राप्त होता है। आखिर यह मान्यता कैसे प्रारम्भ हुई ?

तिब्बत के पूर्व में स्थित खाम प्रदेश में एक धार्मिक एवं तपस्वी औरत रहती थी जिसने एक पुत्र को जन्म दिया था। वह पुण्य प्राप्त करने की अभिलाषा से अभिभूत थी। उसने मन ही मन सोचा, 'कहते हैं कि खांग रिपोचे का कोरा करने से सर्वाधिक पुण्य प्राप्ति होती है अतः मैं अपने पुत्र को साथ लेकर जाऊँगी ताकि हम दोनों को ही पुण्य प्राप्ति हो और हमें भगवान का आशीर्वाद मिले।'

अपने परिवार वालों और मित्रों को प्रणाम करके वह निकल पड़ी और कई महीनों तक अपने पुत्र के साथ चलती रही। उन लोगों को ठंडे व सूखे मरुस्थल और घने घास के मैदानों को पार करना था जहाँ जंगली गधे भुँडों में दौड़ते थे। वहाँ काली गर्दन वाले सारस का समूह आसमान में कुड़कुड़ाता रहता था और हिरण घुटनों तक ऊँची-ऊँची घास पर छलँग लगाते थे। उन्हें अपनी यात्रा के दौरान कभी-कभी राह में मुस्कराते हुए



और मंत्रों का जाप करते हुए कई धर्मयात्री भी मिले। बोन ॐ मा त्री मू ये सा ले दू का जाप करते थे और बौद्ध ॐ मणी पद्मे हुँ का जाप करते थे। हिमालय के दक्षिणी भाग से आए हुए हिंदू सन्यासी ॐ नमः शिवाय का जाप करते थे। किसी-किसी दिन उन माँ-पुत्र को मैदानों में तेज गति से भागते जंगली कुत्तों के अलावा कोई नजर नहीं आता था।

कई महीनों पश्चात अखिरकार वे दोनों खांग रिपोचे पहुँच ही गए। माता ने अपने पुत्र को अपनी पीठ पर दुशाला में सुरक्षापूर्ण तरीके से बांधा और अपना कोरा प्रारम्भ किया। जैसे ही वह पहाड़ पर पहुँची तो उसे भूख व प्यास का अनुभव होने लगा परंतु वह जानती थी कि द्रोल्मा मार्ग कोरा के लिए सबसे ऊँचा स्थान था, अतः उसकी चढ़ाई सम्पन्न करने के पश्चात उसे साँस लेने व सुस्ताने के लिए पहाड़ के दूसरी तरफ आसानी होगी।

अपने पुत्र को अपने सीने से चिपकाकर वह अपनी हर साँस के साथ ओम् मानी पद्मे हम का जाप करती रही और अपनी चढ़ाई को आगे बढ़ाते रही। अंततः उसने द्रोल्मा पास की चढ़ाई सम्पन्न की और अपनी प्रार्थना व धन्यवाद अर्पित किया। उसे बहुत प्यास लग रही थी परंतु वहाँ पीने के लिए पानी नहीं था और उसके आसपास जमा बर्फ की पतली परत कीचड़ से लथपथ थी। उसे उस जगह से नीचे देखने पर कुछ छोटे तालाब दिखाई दे रहे थे परंतु वे उस रास्ते से लगभग पचास मीटर दूर थे।

माता यह जानती थी कि ये तालाब डाकिनी के स्नान करने के लिए बने तालाब हैं। डाकिनी एक देवी थी जिसका स्वभाव अच्छे लोगों के लिए बहुत अच्छा और बुरे लोगों के प्रति क्रोधित होता था। हिंदू उसी तालाब को गौरी जो कि भगवान शिव की पत्नी हैं, के नहाने का कुंड कहते हैं। तिब्बत में डाकिनी को खादरोमा के नाम से जाना जाता है। धर्मयात्रा आए प्यासे श्रद्धालु ये जानते थे कि किसी के भी द्वारा डाकिनी के घर की शांति को भंग करना डाकिनी को बिल्कुल नहीं भाता था। परंतु अपनी प्यास को सहन कर पाने में असमर्थ वह माता अपने आप को रोक नहीं पायी और तालाब के पास नीचे की ओर उतर कर आई एवं पानी पीने के लिए नीचे झुकी।

उसे इतनी अधिक प्यास लगी थी कि वह तालाब में नीचे झुक कर पानी पीने लगी। अचानक ही उसका पुत्र जिसे उसने अपनी दुशाला की सहायता से अपनी पीठ पर बाँध रखा था, वह फिसल कर तालाब के बर्फ जितने ठंडे पानी में जा गिरा।

'नहीं, नहीं, नहीं, नहीं!' वह चिल्लाई। उसने घबराते हुए तेजी से अपने पुत्र को बाहर खींचने का प्रयास किया परंतु तालाब के अत्यंत ठंडे पानी के कारण उस बच्चे की मृत्यु हो गयी।

उस माता का हृदय शोक में डूब गया। वह अपने चेहरेको नोचने लगी और अपनी छाती पीटते हुए बिलख-बिलख कर रोने लगी। अपने बालों में मिट्टी डालकर वो विलाप करते हुए भगवान से अपने पुत्र को पुनर्जीवित करने की विनती करने लगी। परंतु देवताओं ने उसे पुनर्जीवित नहीं किया। तत्पश्चात उसने अपने पुत्र को कस कर अपने सीने से लगा लिया परंतु उसके हृदय की धड़कन भी उसके पुत्र के हृदय की धड़कन को ना जगा पाई। माता के आँसुओं की गरम धार उस बच्चे के चेहरे पर पड़ रही थी परंतु फिर भी उसके शरीर में ताप उत्पन्न नहीं हुआ।

खांग रिपोचे की परिक्रमा के फलस्वरूप मिलने वाले वाले पुण्य को अर्जित करने वह वहाँ आयी थी परंतु एक ही क्षण की लापरवाही ने उससे उसका सब कुछ छीन लिया था। एक पुत्र की मृत्यु का कारण उसकी माँ हो इससे बड़ा अपराधबोध किसी माँ के लिए और क्या हो सकता है।

पूरी रात वह औरत अपने बच्चे के शोक में रोती रही व विलाप करती रही। सुबह के समय जब रो-रो के उसका गला दर्द करने लगा व उसकी आँखों के आँसू सूखने लगे तब पश्चाताप करने के उद्देश्य से उसने निर्णय लिया कि उसे अपना कोरा पूरा करना चाहिए ताकि उसके द्वारा घटित पाप का पश्चाताप हो सके। वह पर्वत के आगे प्रार्थना करने लगी, 'ओ खांग रिपोचे ! मैं तुमसे अनुरोध करती हूँ मेरे पापों को क्षमा कर दो और इस असहनीय विपत्ति से मुझे बचा लो। जब तक मुझे ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता कि तुमने मुझे क्षमा कर दिया है, मैं तुम्हारे चारों ओर घूँ ही चक्कर लगाती रहूँगी। अब या तो मुझे पूर्ण रूप से पाप से मुक्ति मिले नहीं तो मृत्यु ही अब मुझे यहाँ से दूर कर सकती है।

अतः अपने हृदय के बोझ को हल्का करने हेतु उसने कोरा करना आरम्भ किया। उसने प्रार्थना करते हुए पूर्व तीर्थ यात्रियों के स्वयं के शरीर द्वारा मापित बावन किलोमीटर की लम्बाई वाला रास्ता पार किया। गुफाओं में योग और साधना करने वाले लम्बे बालों वाले सन्यासियों को पीछे छोड़ते हुए वह अपनी यात्रा पर आगे बढ़ती रही। उसने किसी से भी खाने या पीने के लिए कुछ नहीं माँगा। जब-जब वह द्रोल्मा पास पर चढ़ाई करती थी तब तब वह अभिलाषा एवं तृष्णा भरी आँखों से उस तालाब की ओर देखती थी जहाँ उसने अपने पुत्र को खोया था।

उसने सात, दस, बारह कोरा सम्पन्न किए परंतु अभी भी अपराध बोध से मुक्ति के कोई संकेत नहीं मिल रहे थे। उसने सभी पवित्र पर्वतों की परिक्रमा की परंतु अपने तेरहवें कोरा तक वह थक कर चूर हो चुकी थी और खुली आँखों से एक और कदम आगे बढ़ा पाने में असमर्थ थी। अतः वह भपकी लेने के लिए वही पास एक चट्टान पर लेट गयी।

जब उसकी आँख खुली तो उसने पाया की जिस चट्टान पर वह लेटी थी वहाँ उसके हाथ, पैर और शरीर के गहरे निशान बने हुए थे । उसे समझते देर ना लगी कि खांग रिपोचे ने उसे क्षमा कर दिया था और उसके दुःख व विषाद को दूर कर दिया था । चट्टान पर बने निशान इसी बात के सूचक थे । उसने पर्वत को प्रणाम किया और नए सिरे से जीवन की शुरुवात करने के उद्देश्य से अपने गाँव आमदो की ओर रवाना हुई ।

जो भी तीर्थयात्री खांग रिपोचे अथवा कैलास पर्वत की यात्रा पर जाते हैं वे अभी भी हाथ पैरों के निशान उस चट्टान पर देख सकते हैं जो कि उस माता के हैं जिसने अपने पुत्र को खो दिया था और उसी दुःख में उसने तेरहवाँ कोरा किया था । चट्टान पर बने निशानों के कारण ही बौद्ध लोगों की यह मान्यता है कि यदि तेरहवाँ कोरा दक्षिणावर्त दिशा में किया जाए तो उसके परिणाम स्वरूप अधिक पुण्य प्राप्त होता है ।

Mother's Grief

People all around the world walk around objects, temples, mountains or lakes that are sacred to them. It is an ancient way of showing respect to the Creator. In the Tibetan language, such a walk around a great stupa, statue, lake or mountain is called a *kora*.

Kang Rinpoche, the holy mountain in the Ngari region of the Tibet Autonomous Region, has been a sacred site for far longer than anybody remembers. Pilgrims of many faiths travel there to perform *koras* around the mountain, which is also known as Kailas or Meru. The mountain is respected in Hinduism, Buddhism, Jainism, Sikhism, Bönpo, and pilgrims from many other religious traditions visit. The Bön walk the *kora* in the anti-clockwise direction while others do it clockwise. Buddhists believe that performing 13 *koras* around Kang Rinpoche brings most merit. How did this come about?

In the Kham region of Tibet, far to the east of Ngari, lived a devout woman who gave birth to a son and was overcome with the desire to earn religious merit. 'Everybody says that the greatest merit comes from performing a *kora* around Kang Rinpoche. I will take my son with me, so that we will both gain merit and the kindness of the gods,' she thought.

After saying goodbye to her family and friends, she walked for many months with her young son. They had to



cross dry, cold deserts and vast grasslands where wild donkeys ran in herds. Flocks of black-necked cranes crossed the skies and deer darted through the knee-high grass of the marshes. On some days they met many pilgrims on the road, smiling and silently reciting their mantras. The Bön recited *Om Ma Tri Mu Ye Sa Le Du*; the Buddhists recited *Om Mani Padme Hum*; the ascetic Hindus from the south of the Himalayas recited *Om Namoh Shivaaya*. On some days the mother and baby boy met nobody but wild dogs scurrying across the plains.

After many months, the mother and son finally reached Kang Rinpoche. The mother tied her son securely to her back with a shawl and started her *korā*. As she climbed the mountain, she felt hunger and thirst; but she knew that the Drolma Pass was the highest place on the *korā*, and that it would be easier to breathe on the other side of the mountain.

She chanted *Om Mani Padme Hum* with each breath, hugged her son close to her body, and climbed. She finally climbed to Drolma Pass and offered her prayer of thanks. She felt very thirsty. But there was no water to drink, and the thin snow around her was covered in trampled mud. She saw a few small ponds about fifty meters below the path.

The mother knew that these were the bathing pools of a *dakini*, a goddess who can be very kind to good people and very angry towards bad people. The Hindus call these ponds the bathing pool of Gauri, who is the wife of the great god Shiva. In Tibet the *dakini* is known as Khadroma. The thirsty pilgrim knew that the *dakini* didn't like it when someone disturbed her home. But unable to bear her thirst anymore, the mother climbed down to a pool.

She was so thirsty that she hurriedly bent down to drink water. Her baby boy slipped off her back and fell into the ice-cold water of the pond.

‘No, no, no, no, no!’ she shouted. She tried desperately to pull him out, but the cold water instantly killed the baby.

The mother was heartbroken. She clawed at her own face and beat her chest. She threw dirt into her hair and cried and begged the gods to make her son live again. But the gods didn’t bring the child back to life. She hugged her son close to her chest, but the beats of her heart didn’t make his heart beat again. Hot drops of her tears fell on the baby’s face, but it didn’t bring warmth to his body.

She had walked all the way to Kang Rinpoche to earn merit. But one moment’s carelessness had taken away everything that was dear to her. Who can imagine guilt greater than that of a mother who has caused the death of her own baby?

The mother mourned and cried throughout the night. In the morning, when her eyes had run dry of tears and her throat hurt from crying, she felt her grief decrease a little. She realized that she needed to continue her *koras* to pay for her sin. ‘O, Kang Rinpoche! I pray to you to forgive my sin and lift this unbearable grief away from me. I shall walk around you until I see signs that I have been forgiven. Only complete forgiveness or death can set me free,’ she said to the mountain.

She set out to perform as many *koras* as were needed to set her heart free. She walked past pilgrims who measured the entire length of the fifty-two kilometer path with their bodies, saying prayers all the while. She walked past long-haired ascetics praying and performing yoga in caves. She asked nobody for food or drink. Every time she climbed up to the Drolma Pass, she looked with longing at the pond where she had lost her child.

She finished seven, ten, twelve *koras*, but the grief and guilt stayed. Still, she walked around the sacred mountain.

On the thirteenth *kora*, she became very tired. Unable to take another step forward or keep her eyes open, she lay down on a rock to take a short nap.

When she awoke, she saw that her body, hands, and feet had left deep dents on the rock where she had slept. She understood that Kang Rinpoche had forgiven her and taken away the guilt and grief from her. The marks on the rock were proof of that. She thanked the mountain and made her long walk back to her village in Amdo where she started her life anew.

Pilgrims who go to Kang Rinpoche can still see the marks left behind by the mother who lost her child and performed thirteen *koras* around the sacred mountain. Ever since, Buddhists believe that performing thirteen *koras* will bring great merit to the pilgrim.

भाइयों के बीच युद्ध

भारत के उत्तराखंड राज्य के पांगू नामक गाँव में श्यांगसे नामक मंदिर है। वह गाँव के स्थानीय लोगों के कुलदेवता है। चौदांस के पास देवी पूर्णागिरी माता का मंदिर है जो कि मूलरूप से उत्तराखंड के दक्षिणी ऊष्ण मैदानी भाग में स्थित टनकपुर की रहने वाली है। श्यांगसे ब्यांस घाटी में रहने वाले रंग जाति के लोगों के एक प्राचीन देवता हैं परंतु पूर्णागिरी हिंदुओं की एक प्रसिद्ध देवी हैं। आखिर पूर्णागिरी आर्द्र प्रदेश से एक पहाड़ी गाँव की ओर कैसे पहुँची?

बहुत पहले की बात है, भाइ फूँक करने वाला एक धामी जो श्यांगसे भगवान का भक्त एवं उनका प्रतिनिधि था, अपने छोटे भाई के साथ टनकपुर जा रहा था। जैसे ही वह भारत व नेपाल के सीमा क्षेत्र से लगे टनकपुर में पहुँचा, उस समय वहाँ हैजा फैला हुआ था। यह उन दिनों की बात है जब हिमालय के तलहटी इलाकों में हैजा व चेचक का बहुत प्रकोप था एवं जिसने हजारों लोगों को मार दिया था एवं गाँव के समस्त परिवारों को नष्ट कर दिया था।

यात्रा पर आए दोनो भाईओं ने सोचा, 'यदि हम टनकपुर में रूकेंगे तो अवश्य ही मारे जाएँगे।' अतः उन्होंने अत्यंत तीव्रता से चौदांस प्रस्थान करने का निर्णय लिया और वहाँ के लिए रवाना हो लिए। कहीं ना कहीं वे इस बात से भी भयभीत थे कि कहीं उन लोगों के माध्यम से हैजा उनके गाँव में भी ना फैल जाए और उनके परिवारों व मित्रों को बीमार कर दे।

परंतु छोटे भाई के शरीर में अनदेखे रोगाणु पहले ही प्रविष्ट हो चुके थे। वह तेज-तेज चलने का प्रयास कर रहा था परंतु शीघ्र ही वह अपने भाई से पिछड़ गया। बड़ा भाई, जो कि भगवान का धामी था, उसने अपने भाई की ओर देखा और उसे समझते देर ना लगी कि उसके भाई को हैजा ने ग्रस लिया है एवं जिससे उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

बीमार छोटे भाई ने कहा, 'भैया ! इतनी जल्दी-जल्दी मत चलो, मैं अभी भी चल पाने में समर्थ हूँ और यदि तुम मेरे लिए गरम पानी ला सको तो मैं जल्दी घर भी पहुँच जाऊँगा।'



बड़े भाई ने कहा, 'तुम्हारी मृत्यु बहुत नजदीक है। मैं नहीं चाहता कि ये बीमारी मुझे भी पकड़ ले। आखिर किसी को तो भाग के गाँव जाकर ये सूचना देनी होगी एवं सबको चेताना होगा' और ऐसा कहते हुए अपने बीमार भाई को सड़क किनारे यँ ही पड़ा छोड़कर वह शीघ्रतापूर्वक वहाँ से चला गया।

बीमार भाई ने सोचा, 'मेरा भाई मुझे यहाँ मरणासन्न अवस्था में छोड़ कर चला गया परंतु यदि वह हैजा से बचकर निश्चित समय पर पहुँच जाएगा तो कई लोगों की जान बच जाएगी। अतः परिस्थिति को सोचे समझे बिना किसी भी अच्छे-बुरे निर्णय पर पहुँचना अभी ठीक नहीं होगा।'

चौदांस पहुँचने के बाद उस धामी ने अपने भाई के साथ हुई घटना का सबके सामने ज्यों का त्यों उल्लेख कर दिया। ये सुनते ही गाँव वाले फुर्ती के साथ हैजा से बचने के उपायों में लग गए जैसे कि अपने पीने के पानी को उबालना और हैजा ग्रसित किसी भी गाँव के व्यक्ति को अपने गाँव आने से रोकना। फलस्वरूप कोई भी बीमार नहीं पड़ा और किसी की भी मृत्यु नहीं हुई।

परंतु चौदांस गाँव के लोगों को अभी भी यह आशा थी कि धामी का वह बीमार भाई लौट के वापस आ जाएगा। कई हफ्ते पश्चात भी जब वह नहीं लौटा तो उन लोगों ने सोचा कि वह जीवित नहीं है और उसकी आत्मा को शांति मिले इसके लिए उसका अंतिम संस्कार कर देना चाहिए। अतः अत्यंत दुःख के साथ वे उसके अंतिम संस्कार के लिए तैयारी करने लगे ताकि ऐसा करके वे उसके जीवित होने की सारी आशाओं से मुक्ति पाकर अपना जीवन शांतिपूर्वक जी सकें।

परंतु इससे पहले कि गाँव वाले अंतिम संस्कार की विधि प्रारम्भ कर पाते, श्यांगसे देवता धामी के शरीर में प्रविष्ट हो गए और उन्होंने गाँव वालों को बताया कि वह आदमी अभी भी टनकपुर में ही है और जीवित है। उसकी आत्मा अभी मुक्त नहीं हुई है।

टनकपुर से चौदांस के बीच के रास्ते में जहाँ उसका भाई उसे बिना किसी के सहारे छोड़ कर आया था, वहाँ वह मरणासन्न अवस्था में पड़ा था। जब वह जीवन और मृत्यु के बीच में भूल रहा था तब एक भटकता हुआ योगी वहाँ आया एवं उस मरणासन्न व्यक्ति के पास गया। उसके हाथ में दो चिमटे थे जो कि साधु-सन्यासियों के भजन कीर्तन करने के लिए एक सहायक सांगितिक उपकरण होता है एवं जिससे उन्हें अलाव को समेटने में सहायता मिलती है। उन दो चिमटों में से एक स्वर्ण का था और दूसरा लोहे का।

वह योगी उस बीमार आदमी के पास दुबक कर बैठ गया और एक - एक बार उसे अपने स्वर्ण वाले चिमटे से और लोहे वाले चिमटे

से छुआ। उसने उस बीमार व्यक्ति से पूछा, 'तुम इनमें से कौनसा चिमटा लेना पसंद करोगे?'

बीमार व्यक्ति ने सोचा, 'मैं हैजा से ग्रसित हूँ। यदि मैं सोने का चिमटा लूँगा तो संभव है मैं स्वर्ण का लालच रखने वाले डाकुओं द्वारा लूटा जाऊँ। यदि मैं जीवित बच जाता हूँ और चौदांस वापस लौट जाता हूँ तो हो सकता है कोई मुझ पर आक्रमण कर ले और मैं मारा जाऊँ। 'अतः उसने योगी से कहा, 'मैं लोहे वाला चिमटा लूँगा।'

बीमार व्यक्ति को वह लोहे का चिमटा देकर फौरन ही वह योगी वहाँ से गायब हो गया। 'क्या मैं कोई स्वप्न देख रहा हूँ?' बीमार व्यक्ति ने सोचा परंतु लोहे के चिमटे को अपने बगल में देख उसे भरोसा हो गया कि वह सपना नहीं देख रहा था। बीमार होने के कारण उसे नींद के भ्रोंके आ रहे थे जिस कारण वह वास्तविकता और स्वप्न में भेद नहीं कर पा रहा था।

तभी उसे एक बच्चे की आवाज सुनाई दी। उस बच्चे ने पूछा, 'क्या तुम ठीक हो?'

वह पहाड़ों में रहने वाली एक छोटी बच्ची थी जिसने तिब्बती कपड़े पहने हुए थे। बीमार व्यक्ति ने उसे उत्तर देने का प्रयास किया परंतु हैजा के कारण वह अत्यधिक कमजोर हो गया था और कुछ भी बोल पाने में असमर्थ था। यह देख वह बच्ची तेजी से दौड़ती हुई गयी और अपने माँ-बाप को बुलाकर लायी जो उस बीमार को उठा के अपने तंबू में ले गए एवं उसके स्वस्थ होने तक उसकी सेवा की।

जब धामी का वह छोटा भाई इतना स्वस्थ हो गया कि अपने गाँव चौदांस वापस जा सके, तब माँ पूर्णागिरी ने उसे अपना धामी नियुक्त किया ताकि वह चौदांस की यात्रा कर सके। साधु के वेश में आना और उस बीमार के आगे स्वर्ण व लोहे के चिमटों का प्रस्ताव रखना क्या यह माँ पूर्णागिरी की ही एक योजना थी ताकि वे उस बीमार व्यक्ति को परख सकें या फिर वो यम थे जो उसे जीवन और मृत्यु में से किसी एक को चुनने के लिए अवसर दे रहे थे या फिर माँ पूर्णागिरी ने ही उसको अपना धामी चुनने के लिए उन तिब्बती लोग व उनके तंबू के माध्यम से यह भ्रमजाल रचा था? हो सकता है उस बच्ची के रूप में माँ पूर्णागिरी स्वयं ही प्रकट हुई थी।

माँ पूर्णागिरी और उनका धामी चौदांस गाँव पहुँच तो गए परंतु धामी के बड़े भाई के शरीर में प्रविष्ट श्यांगसे देव जो कि वहाँ के प्रमुख एवं सर्वप्रधान देव थे, उनको अपने गाँव में नयी देवी का आगमन अच्छा नहीं लगा और उन्होंने माँ पूर्णागिरी को वहाँ से चले जाने को कहा।

पूर्णागिरी ने अपने धामी के माध्यम से श्यांगसे देव के धामी को कहा, 'मैं एक देवी हूँ और मुझे कोई डरा धमका नहीं सकता।'

उन दोनों देवी देवता ने इस मानुषिक संसार में अपनी श्रेष्ठता साबित करने के लिए युद्ध करने का निर्णय किया। गाँव के लोगों के सामने चमत्कारों का प्रदर्शन करते हुए एक धामी दूसरे धामी पर प्रहार करने लगा।

माँ पूर्णागिरी ने एक बड़े घराट के पत्थर को उठाकर उससे अपने छाती पर जोर से चोट की और वह पत्थर टुकड़े-टुकड़े हो गया। श्यांगसे देव ने अपनी शक्ति दिखाने के लिए किसी बड़े पत्थर को नहीं उठाया अपितु अपनी मुट्टी में चावल के दानों को भरकर उसे इस तरह से फेंका जो किसी आम मनुष्य के बस बात नहीं है केवल एक देवता ही ऐसा चमत्कार कर पाने में समर्थ होता है। दोनों देवों ने एक दूसरे से अधिक शक्तिशाली होने के प्रमाण के लिए आपसी संग्राम जारी रखा और अंततः श्यांगसे देव ने पूर्णागिरी के आगे अपनी हार स्वीकार कर ली। समतल प्रदेश की देवी ने पहाड़ों के देवता को पराजित कर दिया था अतः माँ पूर्णागिरी का मंदिर बनाया गया परंतु श्यांगसे देव के मन में अभी भी देवी के लिए द्वेष भाव ही था।

उन्ही दिनों पहाड़ों में अचानक तेजी से हैजा फैलने लगा था। उसने सम्पूर्ण गाँव को अपनी चपेट में ले लिया और पूरा गाँव विनष्ट हो गया। घबरा कर गाँव के लोग अपने-अपने पैतृक भूमि की ओर प्रस्थान करने लगे थे परंतु माँ पूर्णागिरी का धामी स्वयं हैजा से सुरक्षित जीवित बच गया था अतः लोगों ने उस पर आस लगा रखी थी कि वह इस कष्टदायक परिस्थिति का कुछ हल निकालेगा।

वे उसके आगे पुकार करने लगे, 'हे मृत्यु पर विजय प्राप्त करने वाले माँ पूर्णागिरी के धामी ! हमारी रक्षा करो !' नवयुवक धामी ने अपनी देवी से गाँव वालों की रक्षा की गुहार लगाई और माँ पूर्णागिरी ने उसके मस्तिष्क में प्रकट होते हुए कहा, 'चिंता मत करो और मेरे निर्देश का पालन करो। एक ज्वाला प्रज्वलित करो और उसमें जौ, तिल व घी अर्पित करो।'

गाँव वालों ने माँ पूर्णागिरी के बताए अनुसार वैसा ही किया और अनुष्ठान का धुआँ पूरे पांगू गाँव में फैल गया और लोग हैजा के प्रभाव से सुरक्षित बच गए। माँ पूर्णागिरी का चारों ओर गुणगान होने लगा। देवी की सब शक्तिओं को देखकर श्यांगसे देव ने उन्हें अपनी बहन बना लिया। तब से लेकर चौदास में माँ पूर्णागिरी की पूजा की जाती है और एक ही प्रदेश में पहाड़ों के देव एवं मैदानी क्षेत्र की देवी एक साथ बसते हैं।

Battle of Brothers

In the village of Pangu in Uttarakhand of India is the temple of Shyangse. Nearby in Chaudans is a temple of the mother goddess Purnagiri whose original home is in Tanakpur, in the hot plains to the south. Shyangse is an ancestor-god of the Rung people of the Byans Valley. But Purnagiri is a famous Hindu goddess. How did Purnagiri travel from the hot, humid plains to a mountain village?

Long ago, a *dhami* (shaman) who worshipped and represented the god Shyangse traveled with his younger brother to Tanakpur. Just as they arrived in Tanakpur, which now lies on the border between India and Nepal, a wave of cholera swept over the region. This was an age when cholera and smallpox regularly attacked the Himalayan foothills, killing hundreds of thousands of people, destroying families and entire villages.

‘If we stay in Tanakpur, we are sure to die,’ the brothers decided and hurried back towards Chaudans as quickly as they could. They were also worried about bringing back cholera to their village and making their friends and families sick.

But the invisible germs had already caught the younger brother. He tried to walk as fast as he could, but soon he started falling behind his brother. The elder brother, who was the shaman to a powerful god, looked at his brother and realized that cholera would kill him.



‘Brother! Don’t walk away so quickly,’ the sick man called out. ‘I can still walk, and if you boil some water for me, I can reach home.’

‘You have been marked for death. I cannot risk catching the disease. Somebody has to run to our village and warn everybody,’ the older brother said and hurried away. He left his sick brother lying by the roadside.

‘It is difficult to say if an action is good or bad without understanding everything,’ the sick man thought. ‘My brother left me here to die, but if he can reach the village without catching cholera, he will save many lives.’

After reaching Chaudhans, the shaman told everyone what had happened to his brother. Villagers made haste and prepared themselves by boiling their drinking water and not letting any outsider enter the village. Nobody became sick, nobody died.

But the heart is always full of hope. The people of Chaudans waited for the sick man to return. When he didn’t return even after many weeks, with great sadness they prepared to perform the man’s funeral. They thought he had died, and he needed a funeral to pass into heaven. Those who were alive also needed the funeral to lay their hopes to rest and carry on with their lives.

Just before the funeral rites could be carried out, the god Shyangse entered the shaman in a trance and told him that his brother was still alive in Tanakpur. He hadn’t passed into the realm of the spirits.

On the road between Tanakpur and Chaudans, where his brother had abandoned him, and without anybody to help him, the younger brother had been close to death. As he suffered between life and death, a wandering yogi carrying two *chimta* tongs walked towards him. These tongs were carried by ascetics to use as a musical accompaniment for

devotional songs, and to help them tend fires. Of the two pairs of tongs, one was of gold, and the other of iron.

The yogi crouched by the sick man and touched him, one by one, with the gold tong and the iron tong. He asked, 'Which of these tongs will you take?'

The sick man thought, 'I am weak from cholera. If I carry gold, I may be robbed by bandits who covet gold. If I live and return to Chaudans, I may be attacked and killed.' He said to the yogi, 'I will take the iron tong.'

The yogi disappeared immediately after giving the sick man the iron tong. 'Am I waking from a dream?' the sick man asked himself. But he saw the iron tong by his side and knew it had not been a dream. He drifted in and out of sleep, unable to separate what was dream and what was real.

'Are you alright?' he heard a young child ask.

She was a young girl in Tibetan dress, a child of the mountains. He tried to answer, but he was weak with disease and could barely speak. The child ran off, and within moments brought her parents, who carried him away to their tent and nursed him back to health.

When the younger brother became strong enough to return to Chaudans, the goddess Purnagiri chose him as her shaman and traveled to Chaudans. Had Purnagiri tested him disguised as a yogi, offering him iron and gold tongs? Or, was it Yama, asking him to choose between life and death? Or maybe Purnagiri had woven the illusion of the tent and the Tibetans to help her chosen shaman. Maybe the girl was the mother goddess herself.

The new shaman and his goddess Purnagiri reached Chaudans. But Shyangse, who was the main god there and worked through the older brother, didn't like the arrival of a new goddess in the village. He told Purnagiri to leave.

‘I am a goddess, and I will not be bullied,’ Purnagiri said to Shyangse. Or rather, she spoke through her shaman to Shyangse’s shaman.

The gods chose to determine superiority through combat in the human world. Each shaman attacked the other shaman, and they performed many miracles before a crowd of amazed villagers.

Purnagiri picked up a millstone and thumped it on her chest. The millstone shattered. Shyangse didn’t pick up large rocks to show his strength. Instead, he grabbed a handful of rice grains and threw them with the great force that only a god can create. The battle continued. Each deity displayed more strength than the other until Shyangse finally accepted defeat before Purnagiri. The goddess from the plains had defeated the god of the mountains. A temple was built for Purnagiri, but Shyangse still disliked her.

Another wave of cholera reached the mountains and spread rapidly. Entire villages died. People panicked and fled their ancestral lands. But the shaman of Purnagiri had survived cholera before, so people put their hopes in him.

‘You defied death once, O shaman of Purnagiri! Save our lives!’

The young shaman prayed to his goddess, and Purnagiri appeared in his mind. ‘Don’t worry, and do as I command. Light a large fire, and offer it barley, ghee and sesame seeds.’

The smoke from the ritual covered the village of Pangu and protected everyone while cholera killed people in other villages. Purnagiri’s glory increased. When Shyangse saw Purnagiri’s powers, he accepted her as a sister. Ever since, Purnagiri has been worshipped in Chaudans, and a mountain god and a goddess from the plains have peacefully coexisted.

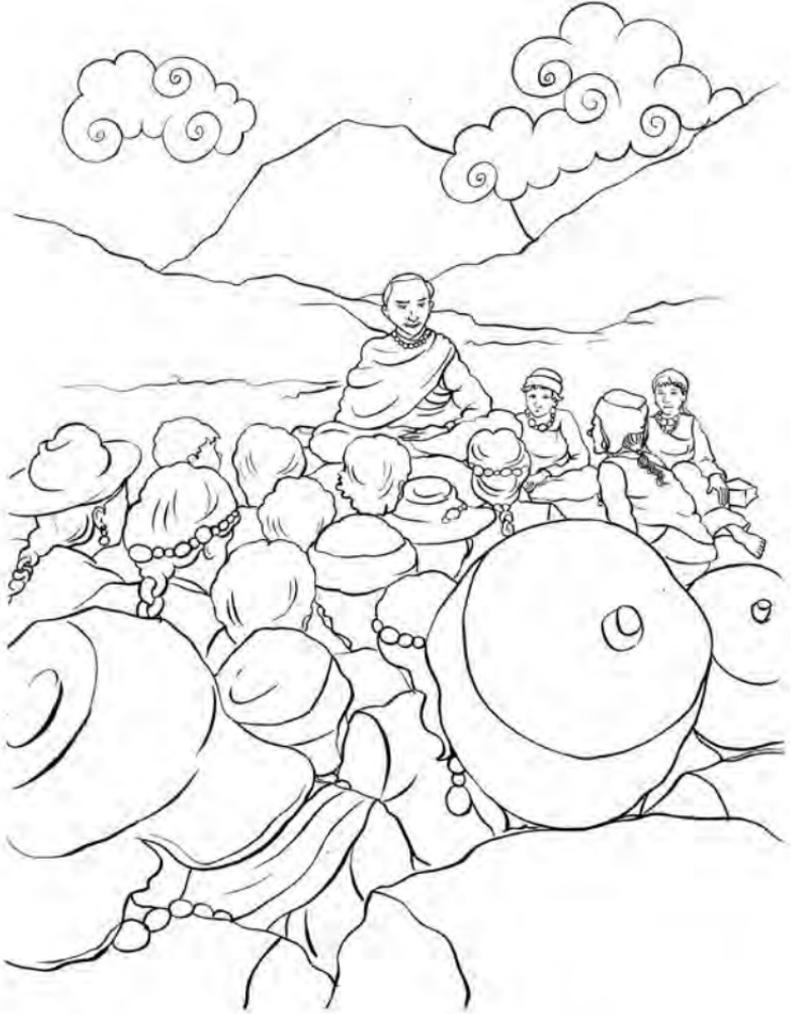
सात सुन्दर घोड़े

हजारों वर्षों पहले तिब्बत में पर्वत के चारों ओर, जिसे कुछ तिब्बती लोग कांग तिसे और दूसरे लोग कैलास या कांग रिपोचे के नाम से जानते थे, एक प्राचीन धर्म तेजी से फैल रहा था जिसका उद्देश्य अच्छे कर्मों व करुणा का विस्तार करना एवं लोगों के मस्तिष्क से अभिज्ञानता को पूर्ण रूप से मिटा देना था। प्राचीन समयमें महान भौंग भुँग ने अपने राज्य में सिल्क-रूट के विस्तृत मार्ग के ऊपर राज्य किया एवं उस राज्य में इस धर्म को 'बोन' के नाम से जाना गया।

भौंग भुँग के साम्राज्य में तौपा शेनरब नामक एक अत्यंत करुणमयी राजकुमार का जन्म हुआ। उसके जन्म के समय से ही यह निर्धारित था कि वह बोनपो का अधिनायक बनेगा और उसने अपने आगमन के साथ ही लोगों के कष्टों को दूर कर दिया था। उसे यह ज्ञात था कि लोग अच्छी एवं दुष्ट आत्माओं के समक्ष जानवरों की बलि देते हैं और मरने से पहले की पशुओं की मिमियाने की ध्वनि के कारण उसका हृदय अत्यंत दुख से भर जाता था अतः उसने लोगों को अपनी करुणा व सम्वेदनशीलता प्रदान करने का निश्चय किया।

उसने कहा, 'किसी जीवित भेड़ की बलि देने की बजाय एक आटे की बनी हुई भेड़ को अर्पित की जाये, पशुओं का रक्त अर्पित करने की बजाय दूध अर्पित किया जाए, ' लोगों को इस बात के लिए तैयार करने के लिए उसे अत्यधिक धैर्य व समय लगा परंतु थोड़े समय पश्चात लोगों को सम्वेदना व करुणा का महत्व समझ आया और वे उस राजकुमार के निर्णय का पालन करने के लिए राजी हो गये। इस प्रकार हिंसा व अनभिज्ञता के अंधकार से भरी हुई भूमि में राजकुमार तौपा शेनरब एक प्रकाश स्तम्भ बन गये।

परंतु वहाँ पर अंधकार रूपी नकारात्मकता की उपासना करने वाले लोग भी उपस्थित थे। देवताओं, राक्षसों एवं राजाओं को लोगों की प्रशंसा की आवश्यकता होती है और वे लोगों के भीतर भय फैलाकर रखते हैं नहीं तो उनकी शक्ति क्षीण हो जाएगी। जो देवता करुणा व उदारता का



प्रसार करते हैं और यदि लोग उनके उपदेशों पर विश्वास करते हैं तो वे देवता शक्तिशाली हो जाते हैं और इसी प्रकार जो दुष्ट आत्माएँ डर व आक्रामकता का प्रसार करती हैं और लोग उनसे भयभीत रहते हैं तो वे शक्तियाँ बलशाली हो जाती हैं ।

कैलास पर्वत से बहुत दूर कोंग नामक स्थान पर तोंपा शेनरब से एकदम विपरीत एक दुष्ट राजा था जिसका नाम छापबा लात्रिंग था । उसने अपने क्षेत्र में रहने वाले लोगों के जीवन को नियंत्रित करके उन पर शासन किया हुआ था । जो लोग उसकी पूजा नहीं करते थे वह उन्हें कष्ट व पीड़ा देता था और जो लोग उसके आगे अपने पशुओं की बलि देते थे एवं स्वर्ण व रत्न अर्पित करते थे, उन्हें पुरस्कृत करता था । केवल वही राक्षस उन लोगों को अनाज, औषधि एवं कपड़े प्रदान कर सकता था अतः किसी भी व्यक्ति के पास इतना अधिकार नहीं था कि वे इस बात का निर्णय ले सकें कि वे उस राक्षस का अनुगमन करना चाहते भी हैं या नहीं ।

जब छापबा लात्रिंग ने यह जाना कि तोंपा शेनरब सच्चाई, उदारता एवं सौम्यता के मार्ग पर चलते हुए उसका प्रचार प्रसार कर रहा है तो उसे बहुत बुरा लगा क्योंकि यदि लोग करुणा एवं उदारता को समझते हैं और सौम्यता पूर्वक एक दूसरे का आदर करते हैं उसकी वजह से समाज में डर व भय घटता जाता है परंतु एक राक्षस राजा के लिए उसकी सबसे बड़ी शक्ति ही लोगों में व्याप्त डर व भय होता है । इसलिए छापबा लात्रिंग को लगा कि कहीं वह अपना बल ना खो बैठे अतः वह तोंपा शेनरब पर आक्रमण करने के उद्देश्य से कैलास पर्वत आया ।

तोंपा शेनरब के दिखाए हुए करुणामयी प्रकाश के मार्ग चलने से रोकने के लिए छापबा लात्रिंग ने लोगों में अविश्वास, लालच, जलन, क्रोध, भूट, हठ, अहंकार एवं आलस्य को फैलाया परंतु अब तक लोग तोंपा शेनरब की शिक्षा को समझ चुके थे अतः छापबा लात्रिंग की एक भी चाल वहाँ ना चल सकी ।

तोंपा शेनरब का विनाश करने के लिए उसने राक्षसों की सेना तैयार की और उनका प्रभुत्व किया । वे राक्षस सदा ही बल व शक्ति के नशे में धुत रहते थे । जब उन राक्षसों ने तोंपा शेनरब पर आक्रमण किया तो उसने अपनी करुणा दर्शाते हुए उन्हें अपने ज्ञान से प्रभावित किया । जो राक्षस अब तक अहंकार और अनभिज्ञता में जीते थे, अपनी हार मानते हुए उन्होंने अपने हथियार भूमि पर रख दिए और गड़रिए और शांतिपूर्वक व्यापार करने वाले लोगों में बदल गए एवं तोंपा शेनरब के दिखाए हुए करुणामयी प्रकाश के मार्ग पर उसके साथ चलने के लिए उसके सहभागी बन गए ।

परंतु उस राक्षस राजा का क्रोध अभी भी समाप्त नहीं हुआ था एवं जिस प्रकार किसी सड़ी हुई मछली के इर्द-गिर्द मक्खियाँ भिनभिनाती रहती

हैं उसी प्रकार दुष्ट विचारों ने उसे चारों तरफ से घेरा हुआ था। जब तौपा शेनरब लोगों में अधिक से अधिक करुणा व ज्ञान का प्रसार करने के उद्देश्य से छा प्रदेश में आया तो छापबा लाक्रिंग एक थके हुए यात्री के रूप में तौपा शेनरब के तंबू में घुसा और किसी महिला द्वारा एक कटोरा पानी पीने के लिए आग्रह करने लगा।

वह एक महिला की सुंदरता एवं दूसरी की बुनाई की कला की तारीफ करने लगा और एक पत्नी के कान में कुछ फुसफुसाने लगा ताकि दूसरी पत्नी को जलन होने लगे। इसी प्रकार एक माता-पुत्री में विरोध उत्पन्न करने के लिए माता के हृदय में संदेह उत्पन्न किया एवं पुत्री के दिमाग को क्रोध से भर दिया। चालाकी भरे शब्दों के बने जादुई धागे में उसने महिलाओं को फाँसा और चालाकी से उन्हें अपने साथ ले गया।

जैसे ही तौपा शेनरब अपने तंबू में वापस लौटा तो वहाँ सब कुछ खाली था। ना ही कोई अग्नि प्रज्वलित थी, ना ही पूर्वजों को अर्पण करने के लिए किसी प्रकार की अगरबत्ती जली हुई थी। तभी अचानक उसकी अनुमति के बिना एक हवा का भ्रौंका उसे छू कर चला गया। तौपा शेनरब को समझते देर ना लगी और वह छापबा लाक्रिंग के राज्य की ओर उड़ चला। उसके न्यायपूर्वक शब्द एवं करुणामयी प्रकाश ने उन दुष्ट विचारों एवं बुरे कर्मों को दूर कर दिया और उस राक्षस राजा के चंगुल में फँसी महिलाओं को छुड़ा लिया। जब वे सब वापस लौट रहे थे तो तौपा शेनरब व वे महिलाएँ रास्ते भर ये प्रार्थना करते जा रहे थे कि छापबा लाक्रिंग अपनी दुष्टता को छोड़ दे।

अनभिज्ञता सदा ही हठीली होती है। छापबा लाक्रिंग इस प्रकार का मनुष्य था जो अपनी आँखों की अपनी ही हथेलियों से बंद करके पर्वत के चारों ओर दौड़ लगाना चाहता था। युद्ध व लड़ाई उसे सुख प्रदान करती थी जिससे उसे शक्ति मिलती थी और उसी शक्ति के बल पर वह जीता था अतः वह तौपा शेनरब के क्षेत्र के घोड़ों के अस्तबल में घुस आया और सात सुंदर घोड़ों को चुराकर गोंगबु नामक स्थान की ओर उड़ गया।

अब तक तौपा शेनरब को यह ज्ञात हो चुका था कि जब तक वह छापबा लाक्रिंग को करुणा एवं उदारता का पाठ नहीं पढाएगा तब तक यह लड़ाई समाप्त नहीं हो सकती अतः उसने छापबा लाक्रिंग के छुपने वाले स्थान की ओर प्रस्थान किया। छापबा लाक्रिंग को गोंगबु की ओर आते हुए राजकुमार का प्रकाशमयी आगमन दिखायी पड़ा। तभी उसने उन घोड़ों को विशाल पेड़ों में बदल डाला और स्वयं उन विशाल पेड़ों के जंगलों में छुप गया।

परंतु तौपा शेनरब की ज्ञान उन्मत्त आँखों ने उन सात पेड़ों को पहचान लिया जो की घोड़ों से बदल दिए गए थे। जैसे ही छापबा लाक्रिंग के भूट का पर्दाफाश हुआ सभी लोगों ने एक-दूसरे से हाथ मिलाया और ये सोच सोच के आश्चर्य चकित हो रहे थे कि कैसे उन पेड़ों की शकल में

उन्हें घोड़े दिखी दे रहे थे। पेड़ों की जड़ें घोड़ों के खुर में बदल गयी थीं काई लगी हुई शाखें घोड़ों के चमकदार चमड़े में बदल गयी थीं और हवा में भूलती हुई टहनियों की बजाय वे घोड़े फुफकारने और हिनहिनाने लगे।

हमेशा की तरह अंत में छापबा लात्रिंग की पराजय हुई। वह रोष के कारण गुर्नने लगा जिसकी वजह से पूरा आकाश कला पड़ गया था एवं पूरी की पूरी घाटी इस प्रकार प्रतीत होने लगी जैसे मानो कुहासे के समंदर में मंथन हो रहा हो। दोबारा छापबा लात्रिंग ने चालाकी से घोड़ों को चुरा लिया और उन्हें लाल रंग की विशाल चट्टानों के भीतर छुपा दिया और उसके ऊपर गहरा अँधेरा बिखेर दिया ताकि किसी को कुछ भी दिखायी ना पड़े।

तब तौपा शेनरब ने ध्यानमग्न होकर स्वयं से प्रश्न किया, 'आखिर कब तक कोई धैर्य संचित रख सकता है?' इस प्रश्न का उत्तर एक दम साफ था कि यदि धैर्यवान होने के कारण किसी व्यक्ति को अज्ञानी व पापी होने की अनुमति मिल जाती है तो इस प्रकार का धैर्य किस काम का है अतः दुष्ट राक्षस के डर से भयभीत लोगों को भय से उबारने के लिए तौपा शेनरब ने अपनी करुणामयी शक्ति से एक सफेद प्रकाश फैला दिया जिससे पूरा अंधकार पूरी तरह से गायब हो गया।

यद्यपि तौपा शेनरब के चमकीले प्रकाश ने छापबा लात्रिंग को अंधा कर दिया था परंतु फिर भी उसने स्वयं को एक काले पर्वत में बदल दिया और तौपा शेनरब को कुचल कर उसे रक्त, हड्डियों व बालों के लाल मिश्रण में बदल डालने के उद्देश्य से उसके ऊपर छलॉंग लगा दी। तभी तौपा शेनरब ने एक विशाल पर्वत का रूप धारण कर लिया जो कि शरीर व मस्तिष्क को आरोग्य कर देने की क्षमता रखता था और उस पर्वत को धीरे से ढक लिया जो कि असल में छापबा लात्रिंग था।

जब छापबा लात्रिंग को तौपा शेनरब की उदारता एवं करुणा ने पूरी तरह से अपने भीतर ढक लिया तब छापबा लात्रिंग ने बारिश की विशाल चट्टानों का रूप धारण कर लिया जिसे तौपा शेनरब ने अपनी चमकीली तलवार से छितर-बितर कर दिया। इस प्रकार एक-एक करके तौपा शेनरब की करुणा के आगे छापबा लात्रिंग की पराजय होती रही और अंततः उसका संहार हो गया और वह एक बोनरी चिंबु नामक पवित्र पर्वत में बदल गया।

तब तिब्बत के लोगों ने देखा कि करुणा की शक्ति हाथियों की शक्ति से भी अधिक प्रबल होती है और सहिष्णुता व उदारता के आगे भय व अन्याय ज्यादा समय तक नहीं टिका रह सकता है। जबसे छापबा लात्रिंग और तौपा शेनरब के बीच युद्ध हुआ है तब से बहुत सारी दुष्ट ताकतों ने करुणा को पराजित करने का प्रयास किया है परंतु आज भी तिब्बत में कई बोनपो मठ बनाए गए हैं जिससे पूरे संसार में करुणा एवं उदारता व्याप्त है।

Seven Horses in a Forest

Thousands of years ago in Tibet, an ancient religion thrived around the mountain known to some as Kang Tise and to others as Kailas or Kang Rinpoche. The religion practiced compassion and good deeds, and tried to erase ignorance from people's minds. It was called Bön, and was the religion of the great Zhang Zhung empire which ruled over a vast stretch of the ancient Silk Road.

A greatly compassionate prince named Tonpa Shenrab was born into the Zhang Zhung empire. He was destined to be a great leader of the Bönpo. He had arrived to lead humans away from suffering. He saw people sacrificing animals to the good and evil spirits of the land. The animals bleated with terror before dying, and that filled his heart with sadness. So he taught the people compassion.

'Instead of offering the life of a sheep, offer a sheep made from dough. Instead of offering blood, offer milk,' he said. It took time and patience for him to convince the people, but when people truly understood the value of compassion, they followed him. Tonpa Shenrab became a beacon of bright light in a land darkened by violence and ignorance.

But darkness also has its worshippers. Gods, demons and kings need the praise and fear of ordinary people, otherwise they grow weak. Gods spreading kindness grow powerful only if people believe in what they preach.



Similarly, demons spreading fear can grow stronger only if people fear them.

Chapba Lakring, the demon king of a place called Kong, far from Kailas, was the opposite of Tonpa Shenrab: he ruled over his people by controlling everything in their lives. He created trouble for people who didn't worship him, and rewarded only those who sacrificed animals to him or offered gold and jewels. Nobody was free to choose if they wanted to follow him, because only he could give them grains, cloths and medicine.

When Chapba Lakring heard that Tonpa Shenrab taught about truth, kindness and beauty, he was very upset. People who understand compassion and beauty treat each other with respect, because of which fear in society decreases. But fear was the strength of the demon king. Worried that he would lose power, he came to Kailas to attack Tonpa Shenrab.

He spread mistrust, greed, jealousy, anger, lies, arrogance, disobedience, and laziness among the people to lead them away from the light of compassion shown by Tonpa Shenrab. But the people had already understood Tonpa Shenrab's teachings, so his tricks failed.

Chapba Lakring commanded his army of a million demons, who were always intoxicated with power, to destroy Tonpa Shenrab. When the demons attacked, Tonpa Shenrab showed them compassion and shared his wisdom with them. The demons, who were humans distorted by arrogance and ignorance, gave up their weapons and became peaceful shepherds and traders. They followed Tonpa Shenrab as he traveled even farther to spread the light of compassion.

But the demon king's anger hadn't disappeared. Evil thoughts buzzed around him like flies around rotting flesh.

One day, when Tonpa Shenrab was traveling around the Cha area to bring the light of compassion to even more people, Chapba Lakring entered his tent as a tired traveler and asked the women inside for water and porridge.

He praised one woman's beauty and the fine weaving skills of another. He whispered into the ear of one wife to make her jealous of another wife. He put suspicion in the heart of the mother and anger in the mind of the daughter. In this manner, with magical ropes made of clever words, he captured the women and took them away with him.

Tonpa Shenrab returned to find his tent empty. No fire had been lit, no incense had been offered to the ancestors, and the wind passed right through without permission. He flew to Chapba Lakring's kingdom and with words of logic and the light of compassion took away the evil thoughts and deeds that had tied the women to the demon king. Before traveling back, Tonpa Shenrab and the women prayed that Chapba Lakring would abandon evil.

Ignorance is stubborn. Chapba Lakring was like a man who wants to race over a mountain while covering his eyes with his own hands. Quarreling gave him pleasure and made him feel alive and strong. So he ran ahead to Tonpa Shenrab's pastures and stole seven beautiful horses and fled to a place called Gongbu.

Tonpa Shenrab understood that unless he showed Chapba Lakring the light of compassion, the fighting would never end. So he traveled to the place where Chapba Lakring hid. The demon king saw the prince of light approach Gongbu and transformed the horses into trees and hid them in a thick forest.

But Tonpa Shenrab possessed eyes of wisdom, so he correctly recognized the seven trees that were his horses. Once the lie was caught, people shook their heads and

wondered why they had seen the horses as trees. The roots of the trees became hooves, the mossy trunks became the shiny coats of fine horses, and instead of nodding in the wind the horses snorted and neighed.

Chapba Lakring was defeated again. He roared in fury and turned the sky black. The valley became a churning sea of fog. Chapba Lakring quickly stole the horses back from Tonpa Shenrab and hid them under a large red rock and spread thick darkness over everything. Nobody could see anything.

Tonpa Shenrab meditated and asked himself: 'Until when should someone be patient?' The answer was clear: if being patient allowed another person to continue being an ignorant sinner, patience is no longer good. Out of compassion for the people who lived in fear of the demon king, Tonpa Shenrab created a bright white light and the darkness disappeared completely.

Even though the brightness of Tonpa Shenrab's light blinded him, Chapba Lakring transformed himself into a black mountain and leapt on Tonpa Shenrab with the intention to crush him into a red paste of blood, bones and hair. Tonpa Shenrab took the form of an even larger mountain with the ability to heal the body and the mind and softly covered the black mountain that was Chapba Lakring.

When the weight of compassion smothered him, Chapba Lakring turned himself into a rain of rocks, which Tonpa Shenrab scattered by dancing with a gleaming, bright sword. The demon king's attacks were defeated one by one by Tonpa Shenrab's great compassion. Finally, he collapsed and became Bonri Chinbu, the sacred mountain.

The people of Tibet saw that compassion is more powerful than weapons, and that tolerance and kindness outlive fear and tyranny. Since this great battle between

Chapba Lakring and Tonpa Shenrab, many evil forces have tried to defeat compassion. But even today, new Bönpo monasteries are being built in Tibet, and kindness is alive all over the world.

राक्षसी का पतन

नेपाल के जुमला जिले के जाईरा नामक गाँव में सरकी देव प्रकट हुए थे। वहाँ एक गाय हर एक शाम को चमकीले पत्थर पर अपना दूध अर्पित करती थी। जब उस गाय के क्रोधी चरवाहे ने क्रोधवश उस चमकीले पत्थर पर हमला किया तो वह पत्थर तीन टुकड़ों में विभाजित हो गया एवं चमत्कारी ढंग से तीन जगहों पर जा गिरा जहाँ हरकी की समाधि बनायी गयी।

कई सदियों के पश्चात, परियार जाति की एक महिला जाईरा निवासी अपने पिता के घर से थेहे के एक गाँव हुमला की ओर लौट रही थी जहाँ उसके पति का घर था। करनाली के साथ बहने वाली सहायक नदी के ऊपर एक ऊँची पहाड़ी पर से उस दिशा में खस नाम का गाँव अंतिम गाँव था, जहाँ सैकड़ों घरों का भुंड था, बच्चे एक-दूसरे के साथ घरों की छतों पर खेल रहे थे। एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए वृक्ष के तने को काट कर उससे घरों की सीढ़ियाँ बनायी गयी थी। उस गाँव के सभी परिवार वालों ने किसी दूसरे देश में जा बसने की बजाय अपने घरों का बँटवारा करके उन्हें छोटे से छोटे घरों में विभाजित कर लिया था। अक्सर वहाँ के आदमी काम की तलाश में अपने क्षेत्र को छोड़कर भारत और तिब्बत प्रदेश के स्वायत्त प्रांत न्गारी में स्थित पुरांग चले जाते थे।

उस परियार जाति की महिला ने थेहे में तथाकथित उच्च जात के शक्तिशाली देवताओं 'वृद्ध रामपाल एवं उसके छोटे भाईयों की समाधि' को देखा था। एक परियार जाति की होने के कारण उसके कोई अपने देवता नहीं थे, और दूसरे देवता अन्य देवताओं की ही तरह ना ही उसके लिए कृपालु थे और ना ही उसकी प्रार्थना का सम्मान करते थे।

अपने पिता के घर से लौटते समय उसने उनसे निवेदन किया, 'पिताजी, मुझे एक ढोल दे दीजिए ताकि मेरा पुत्र उसे बजाकर मेरे गाँव के देवता को बुला सके।'

उसके पिता ने कहा, 'उस वृद्ध रामपाल की समाधि के पर जो ढोल है वे बहुत बड़े हैं परंतु मैं तुम्हें हरकी की समाधि का एक ढोल दूँगा।'



सावधान ! इसे अच्छे से छिपा कर रखना । कोई तुम्हें इसे थेहे ले जाते हुए ना देख पाए !'

अतः वह जाईरा से त्यामको नामक ढोल को अपने कपड़ों के भीतर छुपा के और कंधों पर सीकों से बनी एक डलिया में अपने पुत्र को बिठाकर निकल पड़ी । वे करनाली की दिशा के आधार पर थेहे की ओर आगे बढ़ने लगे ।

उस महिला के सभी सहयात्री त्यामको ढोल के अपनेआप बजने की आवाज सुनकर थोड़े परेशान हो रहे थे । कुछ दिन तक यँ ही पैदल चलने के पश्चात वे अपने कौतुहल को रोक नहीं पाए और जब वे अंततः थेहे पहुँचे तो वे सब उस महिला के घर के आगे एकत्रित हुए और उससे पूछने लगे कि आखिर इस ढोल के अपने आप बजने का क्या अर्थ है? क्या यह कोई पूर्वसूचना या संकेत है?

वह माघ के महीने की भयंकर ठंड में बढ़ते हुए चंद्रमा का चौदहवाँ दिन था, जब सभी गाँववाले उस महिला के पास व उसके पुत्र एवं अपनेआप ही बजने वाले त्यामको ढोल के पास एकत्रित हुए थे । उस महिला के एक वर्ष के बेटे का नाम आशे परियार था । हरकी देव के द्वारा ही वह साल भर का बालक उनका धामी चुना गया था ।

वह एक वर्ष मात्र का बालक अवचेतन की अवस्था में चला गया एवं उसने सभी लोगों से कहा, ' मैं जाईरा का हरकी देव हूँ !'

परंतु थेहे के अन्य सभी देवताओं को यह पसंद नहीं आया । वे उस नए देव के आगमन से अप्रसन्न थे । इन सबसे ज्यादा वे इस बात से रूष्ट थे कि हरकी देव उनके गाँव एक दर्जी जाति की औरत के माध्यम से वहाँ आए और उसके पुत्र को उन्होंने अपना धामी चुना ।

रामपाल देव व उसके छोटे भाई बेटाल, मशतो और बनपाल हरकी देव को अपने गाँव से निकालने के लिए उसका पीछा करने लगे और अभद्रता के साथ उससे बोले, 'यहाँ से चले जाओ । ना ही यहाँ तुम्हारी कोई आवश्यकता है और ना ही यहाँ कोई तुम्हें पसंद करता है । नीच जात के लोगों के साथ रहने का निर्णय लेकर तुमने हमारा अपमान किया है ।' परंतु हरकी ने अत्यंत विनम्रता के साथ उत्तर दिया, मैं अपने निर्णय के अनुसार इन लोगों के साथ थेहे में ही रहूँगा ।'

उन दिनों में थेहे कोड़ियामल नामक राक्षसी के भय से आतंकित था जो कि गाँव के नीचे बहने वाली करनाली नदी के अंदर गहरी गुफा में रहती थी । उसने नदी के पास के गाँवों से बच्चों को चुराने के लिए तिब्बत की तरह सूदूर उत्तर मैदानी क्षेत्र से लेकर दक्षिण भारत तक का सफर तय किया था । जब भी वह किसी बच्चे को खा जाती थी तब नदी के भीतर से लाल रक्त का भयंकर बहाव होता था । गाँववालों ने यह सब

देखा हुआ था और वे इस बात से अत्यंत भयभीत थे। करनाली नदी की आवाज अत्यंत द्रुतगामी व गरजती हुई होने के बावजूद भी नदी के भीतर से बच्चों की चिल्लाहट सुनाई दी जा सकती थी जो कि कुछ तिब्बती, कुछ हुमली व कभी कभी तो उर्दू भाषा में भी होती थी। माताएँ अपने बच्चों के कान बंद कर देती थीं व करनाली से निकले रक्तमयी भाग को ढकने का प्रयत्न करती थीं परंतु हड्डियों के टूटने की आवाज और अस्थियों के चूसे जाने की ध्वनि कई दिनों घाटी में तक गूँजती रहती थी।

थेहे के लोगों ने सोचा कि उनके देवता उन्हें राक्षसी कोड़ियामल के आतंक से बचाने में असक्षम हैं अतः बेताल, मशतो, और बनपाल ने एक-एक करके लोभवश गाँववालों के द्वारा प्रदान की गयी बलि स्वीकार की और कोड़ियामल से युद्ध के लिए नदी में छलौंग लगा दी। लेकिन छोटी सी लड़ाई के पश्चात ही वे किसी तरह अपने अस्प्रष्ट अंगों को बचाकर वापस भाग आए। प्रत्येक देवता के साथ हुई विजय के कारण वह राक्षसी और भी क्रोधी व बलवान हो गयी।

अपने आगमन के अगले ही दिन आशे परियार की माँ धूप में अपने पुत्र के देह की मालिश कर रही थी, तभी कोड़ियामल ने गुफा से अपनी जीभ बाहर निकाली और एक अन्य माता जो सूर्य के प्रकाश में अपने पुत्र की मालिश कर रही थी, उससे उसका पुत्र छीन कर ले गयी। उस माता की चीख पुकार व क्रंदन से थेहे के सभी लोगों का दिल दहल गया। वे सभी भयपूर्वक हड्डी टूटने व सुड़कने की आवाज की प्रतीक्षा करने लगे परंतु उन्हें कोई रक्त नहीं दिखायी पड़ा अपितु उन्हें कोड़ियामल के डकार लेने की आवाज सुनाई दी।

उस माता ने रोते हुए कहा, 'रामपाल ! तुम सभी देवों में सबसे बड़े व शक्तिशाली देव हो। सभी देवों से पहले तुम्हारी पूजा होती है। अगर तुम मेरे पुत्र की रक्षा नहीं करोगे तो कौन करेगा? मैं तुम्हें सबसे पवित्र व शीघ्र बलि अर्पित करने का वादा करती हूँ।'

रामपाल अनिच्छापूर्वक उस राक्षसी से लड़ने के लिए नदी में कूद तो पड़ा लेकिन शीघ्र ही चीड़ के छोटे जंगलों में छुपने के लिए अपनी समाधि की ओर वापस भाग आया।

आशे परियार जो कि हरकी देव का ही मनुष्य रूप था, अपनी छत से उड़ा और पूरे परियार मुहल्ले की छतों के ऊपर से एवं दक्षिण दिशा में स्थित सरसों, भांग और जौ के खेतों से होते हुए करनाली नदी के ऊपर चक्कर लगाने लगा।

हरकी ने एकदम बुलंद एवं साफ आवाज में कहा, 'कोड़ियामल, या तो बच्चे को छोड़ दे या फिर अपनी मृत्यु के लिए तैयार हो जा।' सब लोगों को यह अच्छे से सुनाई दिया। बनपाल, बेताल और मशतो देव वह

युद्ध देखने के लिए अपनी-अपनी छुपने की जगहों से बाहर निकल आए और मन ही मन यह कामना करने लगे कि काश कोड़ियामल इस नए रूप वाले देवता को खा जाए, परंतु कहीं ना कहीं वे भी चाह रहे थे कि हरकी उस राक्षसी को मार दे क्योंकि उसके साथ हुए युद्ध में वे सभी पराजित हुए थे ।

कोड़ियामल ने उत्तर में जो कहा वह इतना भयावह था कि उसे यहाँ लिख पाना असम्भव है परंतु वह इतना भयंकर था कि हरकी को करनाली नदी में डुबकी लगनी पड़ी । वह युद्ध तब तक चलता रहा जब तक कि शरद ऋतु में मार्घ महीने की पूर्णिमा का चाँद आसमान में ना चमकने लगा । कई घंटों की लड़ाई के पश्चात नदी के भीतर कोड़ियामल की गुफा का पानी रक्त के रंग से लाल हो गया ।

थेहे के सभी लोग व सारे देव यह दृश्य देख रहे थे तभी चमत्कारी ढंग से वह बालक कोड़ियामल के पेट को चीरकर उस छोटे बच्चे को सुरक्षित निकाल लाया और उसे अपने साथ लिए करनाली नदी के ऊपर तैरने लगा ।

हरकी की शक्ति को देखकर रामपाल, बेताल, बनपाल और एवं मशतो आपस में हरकी के थेहे में वास के बारे में आपसी परामर्श करने लगे । यद्यपि हरकी द्वारा कोड़ियामल के वध किए जाने के पश्चात वे सभी गलत सिद्ध हुए थे फिर भी वे उसके प्रति पक्षपाती हो रहे थे क्योंकि उन्हें लगता था कि वे हरकी से कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है । अतः मार्घ महीने की पूर्णिमा की पूरी रात वे गहन विचार विमर्श करते रहे एवं अगले दिन वे हरकी के पास आए ।

रामपाल ने बड़े अनिच्छापूर्ण भाव में कहा, 'तुम शक्तिशाली हो हरकी अतः तुम यहाँ रह सकते हो । त्यौहारों के समय में लोग मुझसे पहले तुम्हारी आराधना करेंगे ।' अब से पूर्णिमा से पहले की चौदहवीं की रात एवं प्रमुख त्यौहार से एक दिन पहले का दिन हरकी देव का होगा ।'

आशे परियार जो कि हरकी देव का धामी था, अब बड़ा हो गया था और उसने बड़े होकर गाँव के आसपास के राक्षसों और दुष्टों से खूब लड़ाईयाँ लड़ी । चौरासी वर्ष की आयु तक उसने अपने जीवन काल में कई हजार चाँद देखे । जब वह मृत्यु को प्राप्त हुआ, हरकी देव ने आशे परियार के वंशजों को ही अपना धामी चुना ।

कोई भी उच्च कुल का व्यक्ति किसी परियार जाति के व्यक्ति के साथ दुर्व्यवहार करने या फिर उसके वेतन में किसी भी प्रकार की छेड़खानी करने से पहले ये याद रखता है कि परियारों का देवता इतना शक्तिशाली है कि उसने उस राक्षसी को मार गिराया था जिससे उनके उच्च कुल के देवता पराजित हो गए थे । जाति परंपरा की वजह से शायद थेहे में परियार कुल के लोगों के साथ अन्याय हो सकता है परंतु उनके साथ उनके देवता हैं जिन्हें किसी भी प्रकार की डर या धमकी स्वीकार्य नहीं है एवं जो सदा निर्बलों के न्याय के लिए लड़ते हैं ।

The Fall of the Demoness

The god Harki was found in the village of Jaira, in Jumla district of Nepal. Here, a cow offered her milk to a quartz rock every evening. When her angry cowherd attacked the rock, it broke into three pieces and miraculously flew to three places where shrines were built for Harki.

Many centuries later, a woman of the Pariyar caste was making a long journey from her father's village of Jaira to her husband's home in the village of Thehe, which is in Humla. Sitting on a hill above a branch of the Karnali, it is the last Khas village in that direction. Hundreds of houses huddle together. Children play on rooftops joined to each other. Steps are carved into a single tree-trunk to make ladders that go from one level to another level. Families divide the same house into smaller and smaller homes rather than move to another part of the country. Often, men migrate to seek work in India and Purang in the Ngari prefecture of the Tibet Autonomous Region.

The Pariyar woman had seen the powerful gods of the so-called 'upper castes' in Thehe – the elder Rampal, with his own shrine, and his younger brothers. But, as a Pariyar, she didn't have her own god, and the god of others often behaved as the others did: they didn't respect her wishes, nor were they friendly.

'Father,' she begged, 'give me a drum, so that my son may play it and call upon a god from my village.'



Her father said, 'The drums at the shrine of Rampal are too big, but I will give you a drum from the shrine of Harki. Careful! Hide it well. Let nobody see you take it into Thehe!'

She left Jaira with a small *tyamko* drum hidden under her dress and her son in a wicker basket on her shoulders. They headed up the Karnali towards Thehe.

The travelers in her group were puzzled to hear the sound of a small *tyamko* drum beating on its own. After a few days of walking, they couldn't control their curiosity any longer. When they finally reached Thehe, they crowded at the woman's house and asked what was meant by the omen of the drum that beat on its own.

It was on the fourteenth day of the waxing moon in the month of Magh, in the deepest of winter, when villagers gathered around the young mother, the year-old boy, and the *tyamko* drum that played itself. The year-old baby had been chosen by the god Harki as his *dhami*. His name was Aashe Pariyar.

The year-old baby went into a trance and said to everybody, 'I am the god Harki from Jaira!'

But the other gods already living in Thehe were angry at the new god. What they hated the most was that Harki had traveled there with a woman of the tailor caste, and had chosen her baby as his *dhami*.

The god Rampal and his younger brothers Betal, Mashto and Banpal banded together to chase Harki away from Thehe. 'Go away,' they said to him. 'You are not needed here, neither are you welcome among us. You have insulted us by choosing to live among people of low caste.' That wasn't very polite of them. But Harki replied politely, 'I will live in Thehe with the people I choose.'

In those very days, Thehe was being terrorized by the demoness Kodyamal, who lived in a cave deep inside the

river Karnali, just below the village. She traveled as far up north as the plains of Tibet and as far south as the plains of India to snatch children from villages along the river. As horrified villagers watched, blood gushed out of her underwater home whenever she ate a child. Even from under the fast and roaring waters of the Karnali the screams of children could be heard, some in Tibetan, some in Humli, and sometimes even in Urdu. Mothers blocked the ears of their children and tried to hide the bloody foam coloring the Karnali. But the crunching of bones and sucking of marrow echoed through the valley for many days.

The people of Thehe thought that their gods were incapable of defending them from Kodiyamal. One by one, Betal, Mashto and Banpal had greedily accepted sacrifices offered by the villagers and jumped into the river to battle Kodiyamal. But they had come running back after short battles, barely escaping with their limbs intact. With every victory over a god the demoness grew stronger and angrier.

The day after arriving in Thehe, Aashe Pariyar's mother sat massaging him in the sun when Kodiyamal stretched her tongue all the way from her cave and snatched away another child. The cries of the mother broke the hearts of everybody in Thehe. They waited in dread to hear the crunch and slurp, but no blood was seen. Instead, they heard Kodiyamal burp.

'Rampal! You are the eldest and most powerful god. You are worshipped before any other. If you can't protect my child, who can? I promise you the fattest and purest sacrifice!' the mother cried.

Rampal reluctantly entered the river to fight the demoness, but he too fled back uphill to his shrine to hide in a pine grove.

Aashe Pariyar, as the god Harki in human form, flew from his roof, over the roofs of the Pariyar neighborhood.

He flew south over fields of barley and mustard and hemp until he hovered over the Karnali.

‘Kodiyamal, give up the baby, or prepare for a fight to the death!’ Harki said in a clear and loud voice which everybody heard. The gods Banpal, Betal and Mashto came out of hiding to watch, half-wishing that Kodiyamal would eat this upstart god, but also hoping that Harki would kill the demoness who had defeated them.

What Kodiyamal said in reply is too horrifying to write here, but it was arrogant enough that Harki dived into the waters of the Karnali. Their fight continued until the full moon of the month of Margh shone in the winter skies. After many hours of battle inside Kodiyamal’s underwater cave the river frothed with blood.

As the gods and the people of Thehe watched, the miraculous child flew out from the Karnali carrying the baby that he had torn out from Kodiyamal’s belly.

Having seen Harki’s strength, Rampal, Betal, Banpal and Mashto met to discuss Harki’s place in Thehe. They believed themselves to be superior to Harki, but they had been proven wrong when Harki killed Kodiyamal. After debating through the night, they came to him the next day.

‘You are a strong god,’ Rampal said reluctantly. ‘You may live here. During festivals, people will worship you before they worship me.’ Ever since then, the fourteenth day of the waxing moon, a night before the main festival, has been the day of the god Harki.

Aashe Pariyar, the *dhami* for the god Harki, grew up and battled more demons from around the village, saw a thousand moons, and lived to the ripe old age of eighty-four. Since his passing, the god Harki has chosen men from among the descendants of Aashe Pariyar as his *dhami*. If a person of the so-called ‘upper caste’ treats a Pariyar person

rudely, or cheats them out of wages, they remember that the god of the Pariyars is a powerful god who killed a demoness who had defied their four strong gods. The caste system may treat the Pariyars of Thehe unfairly, but they have a god among them who loves justice and fights for the weak, and who doesn't accept bullying.

तीन राजकुमार

चार प्रमुख दिशाओं के चार राजा थे - पूर्व में राजा नांगका वा, पश्चिम में राजा नंगसी ल्हा, उत्तर में राजा शिंगलिंग त्सा व दक्षिण में राजा बदा होर । इन सबमें से राजा नांगका वा सबसे अधिक शक्तिशाली व सम्पन्न था । उसके पास सात हजार सात सौ भेड़ें व पाँच हजार पाँच सौ याक एवं तीन हजार तीन सौ घोड़े थे ।

राजा नंगसी ल्हा का एक पुत्र था जिसका नाम नगका दसी था एवं उसकी माता के देहांत को तीन वर्ष बीत चुके थे । राजा ने अकेले ही काफी मुश्किलों से अपने पुत्र को पाल पोस के बड़ा किया था । एक दिन अचानक ही उसने सोचा कि, 'मेरे पुत्र के लिए यँ अकेले ही वयस्क होना उसके लिए बहुत कठिन होगा अतः मुझे उसके साथ खेलने के लिए एक मित्र की खोज करनी चाहिए । 'उसने अपने पुत्र को अपने साथ लिया और एक भोले में स्वर्ण और दूसरे भोले में चाँदी भरकर अपने पुत्र के लिए एक मित्र मोल लेने निकल पड़ा ।

वह राजा एवं उसका कोर्यू सेंगे रबधान नामक वर्दी धारी सेवक चीशा ग्यामो नामक जगह पर पहुँचे जहाँ उन्हें एक बूढ़ी औरत मिली जिसके साथ दो लड़के थे ।

राजा ने उस महिला से कहा, 'मेरा एक पुत्र है जिसका कोई भाई नहीं है । क्या तुम मुझे तुम्हारे लड़कों को बेचोगी? मैं बदले में तुम्हें एक भोला स्वर्ण व एक भोला चाँदी दूँगा ताकि मेरे पुत्र के साथ ये दोनों लड़के रहें और जीवन भर एक-दूसरे की देखभाल करते रहें ।'

उस वृद्ध महिला ने उत्तर में कहा, 'मैं इन बच्चों को नहीं बेच सकती, परंतु कृपया आप दूसरी तरफ देखें और फिर वापस पलटिए ।'

राजा दूसरी तरफ देख कर फिर जैसे ही वापस पलटा तो उसने देखा की वह वृद्ध औरत गायब हो चुकी थी परंतु वे दोनों लड़के वहीं बैठे हुए थे । यद्यपि वह महिला वहाँ से ओझल हो गयी थी फिर भी राजा ने अपने स्वर्ण के व चाँदी के दोनों भोलों को वहीं रख दिया और दोनों लड़कों को अपने साथ घर ले आया ।



राजा के अब तीन पुत्र थे - एक उसका राजकुमार व वे दोनो लड़के । एक लड़के का नाम शिबुन दायु त्रि बुंग रखा गया व दूसरे का नाम लूफुन नोरबु सेंबा रखा गया ।

उन दोनो लड़कों को राजा अपने पुत्र के समान ही प्यार करता था और वे भी उसे अपने पिता के समान ही पसंद करते थे । राजा ने उनको दयालु, ईमानदार और बलवान बनना सिखाया । जब राजकुमार सात वर्ष का हुआ तब राजा का देहांत हो गया । इस दुःख की घड़ी से उबरने के लिए राजकुमार ने अपने आप को बुद्ध की शरण में अर्पित कर दिया ।

जल्द ही राजा की सम्पत्ति में गिरावट आने लगी । सात हजार सात सौ भेड़ों में से अब मात्रा सात ही बची थी - पाँच हजार पाँच सौ याक में से अब सिर्फ पाँच याक ही शेष थे और तीन हजार तीन सौ घोड़ों में से मात्रा तीन घोड़े ही शेष बचे थे । यह सब देखकर लूफुन नोरबु सेंबा बहुत चिंतित हुआ । उसने अपने भाई एवं सेवक से कहा, 'हमारे पिता हमारे लिए सात हजार सात सौ भेड़ें छोड़ कर गए थे परंतु अब केवल सात ही शेष हैं । मैं पशुओं की संख्या बढ़ाने के लिए एक अच्छे उपजाऊ चारे की व्यवस्था करने का प्रयास करता हूँ । सेवक ! तुम राजकुमार की अच्छी तरह से देखभाल करना ।'

कुछ समय पश्चात शिबुन दायु त्रिबुंग ने राजकुमार से कहा, 'हमारे पिताजी हमारे लिए तीन हजार तीन सौ घोड़े छोड़ कर गए थे परंतु अब उन्में से केवल तीन ही शेष बचे हैं । मैं ढेर सारा पानी व घास रखने की जगह की व्यवस्था करता हूँ ताकि घोड़ों की संख्या में वृद्धि हो सके ।' उसने फिर अपने सेवक से राजकुमार के देखभाल करने की बात कही और अपने काम में चला गया ।

राजकुमार के पास अब सिर्फ उसका सेवक और पाँच याक ही बचे थे जिनकी उसने बहुत मेहनत करके अच्छे से देखभाल की । कुछ वर्षों के बाद उन पाँच याक की संख्या बढ़कर पाँच हजार हो गयी । तब उसके सेवक ने उससे कहा, राजकुमार, यह एक शुभ संकेत है । अच्छे लोगों को उनके कर्मों का अच्छा ही फल मिलता है ।'

राजकुमार ने कहा, 'हमारे पास बहुत सारे मवेशी तो हैं परंतु मुझे मेरे भाईयों की याद आ रही है । मैं जानना चाहता हूँ कि वे लोग कैसे हैं । कृपया उन्हें ढूँढो और अगर तुम उनके पास बहुत सारी व भेड़ें व घोड़े भी पाओ तो इस बात पर ध्यान मत देना और बिना इस बात की परवाह किए उन्हें मेरे पास लेकर आओ ।'

सेवक सेंगे रबधान को भेड़ों का एक समूह मिला जिनकी संख्या सात हजार सात सौ से भी अधिक थी । यह देख वह आश्चर्य में पड़ गया ।

आखिर भेड़ों के इतने बड़े भुंड का स्वामी कौन है, यही सोचते-सोचते वह आराम करने के लिए लेट गया।

उसी क्षण एक भेड़ ने मेमने को जन्म दिया जिसके पूरे शरीर में दाग थे एवं उसके गले में सीपीयों की माला थी। उस नन्हे मेमने ने अपनी माँ से पूछा, 'पूर्वी राज्य में कितने सारे छोटे छोटे मेमने हैं परंतु मैं ही क्यों इस सीप की माला पहने हुए पैदा हुआ हूँ?'

तब भेड़ ने उत्तर में कहा, जल्द ही शीशा ग्यामो के पास की भरील में नहाने के लिए बहुत सारी परियाँ इकट्ठी होंगी और उनमें से जो सबसे गोरे वर्ण की होगी उसका नाम ल्हामो तोंगडुओ होगा। जिसकी पहचान सिर्फ तुम्हारी सीप की माला से ही हो सकती है और यदि उसका विवाह किसी राजकुमार से होगा तो यह पूरे पूर्वीय राज्य के लिए सौभाग्य होगा जिससे पूरे राज्य में आनंद ही आनंद स्थापित होगा।

तभी अचानक से वह सतर्क हो गयी और अपने मेमने से मंद स्वर में बोली, 'लेकिन यहाँ एक व्यक्ति है जो शायद हमारी भाषा समझता है अतः हमें यहाँ से निकल जाना चाहिए।'

वास्तव में वह सेवक सेंगे रबधान भेड़ों की भाषा समझता था। तभी अचानक से वह उस नवजात मेमने की ओर कूदा और उसके गले से सीपीयों का हार छीन कर भटपट उसे अपनी टोपी में छिपा लिया और इससे पहले कि दौड़ते हुए वह उन पाँच हजार भेड़ों के भुंड उसे धूल में अपने खुरों के तले रौंद देते, वह वहाँ से भाग गया।

जल्दी ही वह सेवक लुफुन नोरबु सेनबा के पास दौड़ते हुए गया और उसे राजकुमार का संदेश सुनाया। लुफुन नोरबु सेनबा ने कहा, 'ठीक है, मैं घर आऊँगा परंतु तुम्हें शिबुन दायु त्रिबुंग को ढूँढना पड़ेगा और उसे पकड़कर घर लाना पड़ेगा।'

अपने सफर में थोड़े आगे बढ़ने के बाद उस सेवक ने शिबुन दायु त्रिबुंग का भी पता लगा लिया। जो एक काले ऊनी तंबू के अंदर बैठा हुआ था लेकिन उसके पास केवल एक ही घोड़ा था जो कि तंबू के बाहर आलस्य पूर्वक घास चर रहा था। सेंगे रबधान अपनी निराशा को उससे छिपाते हुए अपनी सहज कौशल से बोला, 'राजकुमार के पास अब पाँच हजार याक है और लुफुन नोरबु सेनबा के पास सात हजार से भी अधिक भेड़ें हैं। तुम्हारे पिताजी की जमा की हुई सम्पत्ति पुनः वापस लौट आयी है। चलो, घर चलते हैं।'

यह सुनते ही शिबुन दायु त्रिबुंग इस प्रकार उछल पड़ा जैसे कि मानो उसे केवल इसी समाचार की प्रतीक्षा थी। वह सेवक से बोला, 'चलो ! अभी घर चलते हैं।' वह अपने एकमात्र घोड़े पर बैठ गया और एक चट्टान की ओर प्रस्थान किया जो कि पंखों से भरी पडी थी और दूर से ही चमक

रही थी। सेंगे रबधान भी तीव्रता से उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। पंख वाली चट्टान के पास पहुँचते ही शिबुन दायु त्रिबुंग ने कहा, 'पाशा देवी ! कृपया दरवाजा खोलो' उसके बाद उसने तीन बार ताली बजायी।

वह चट्टान धीरे धीरे खुलने लगी। उसके अंदर लगभग तीन हजार तीन सौ से भी अधिक सुडौल घोड़े थे। शिबुन दायु त्रिबुंग ने वहाँ बनी एक गुफा में से अपने पिता को बाहर निकाला और सेवक को बोला, 'चलो अब चलते हैं। बाकी के घोड़े अपनेआप हमारे पीछे-पीछे आएँगे।'

कुछ दूरी तय करने के बाद शिबुन दायु त्रिबुंग जिस घोड़े पर सवार था वह उसने सेंगे रबधान को दे दिया। सेवक वापस लौट कर गुफा के पास गया। सभी घोड़े उनके पीछे-पीछे एक निश्चित दूरी पर आ रहे थे। जंगल की काली अंधेरी रात के समान काले रंग से लेकर घोड़ी के सफेद दूध के जैसा रंग और भी कई अन्य रंगों वाले वे सभी घोड़े बहुत सुंदर व भव्य दिखायी पड़ते थे। कितना अद्भुत दृश्य था वह !

उन सभी का बहुत प्यार से राजकुमार द्वारा स्वागत किया गया एवं वे अपने पिता राज्य में रहने लगे। राजकुमार स्वर्ण से बने सिंघासन पर विराजमान हुआ, शिबुन दायु त्रिबुंग चाँदी के सिंघासन पर विराजमान हुआ और लुफुन नोरबु सेबांग को ताम्र सिंघासन प्राप्त हुआ और वे सम्मिलित रूप से अपने साम्राज्य पर सकुशल शासन करने लगे। परंतु उनके दरबार की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए वहाँ कोई रानी नहीं थी और एक राजकुमार तब तक राजा घोषित नहीं किया जा सकता जब तक कि बाकि राजाओं को उसकी शक्ति व सम्पत्ति का पता ना हो।

सेंगे रबधान जो की एक विश्वसनीय सेवक था, उसे भेड़ व उसके नहें मेमने का वार्तालाप याद था। अचानक ही टोपी के अंदर छिपे उस सीप के हार ने उसकी खोपड़ी में हलचल कर दी।

उसने राजकुमार को सलाह देते हुए कहा, 'यह सीप का हार लीजिए और सबसे सुंदर युवती को अपनी दुल्हन बना लीजिए।'

यह सुनकर राजकुमार के भाई सेंगे रबधान के ऊपर हँसने लगे। यद्यपि वे उसकी हँसी उड़ा रहे थे फिर भी राजकुमार ने अपने भाईयों से कहा, 'सेंगे रबधान सदा ही हमारे प्रति ईमानदार रहा है। उसने हमसे कभी भी भूठ नहीं बोला है। यदि वह यह सुभाव दे रहा है तो मैं इसके बताई हुई जगह पर इस सीप के हार को लेकर जाऊँगा और फिर जो होगा वो देखा जाएगा।'

राजकुमार उस सीप के हार को लेकर वहाँ से निकल पड़ा। जब वह सेवक द्वारा वर्णित भील के पास पहुँचा, वहाँ उसने बहुत सी सुंदरियों को भील में तैरते हुए देखा। उस राजकुमार के मरणाधीन होने के कारण उसके देह की महक ने पानी में खेलती हुई परिओं को भयभीत कर दिया

और वे अचानक वहाँ से भाग गयी। परंतु उन सबमें सबसे गोरी व सुंदर परी जिसका नाम ल्हामो तोंगडुओ मा था, भील के अंदर आधी डूबी हुई व आधी पानी से बाहर खड़ी होकर वही रुक गई।

एक क्षण के लिए तो वह राजकुमार यह भूल चुका था कि वह उस भील तक क्यूँ आया था। ल्हामो तोंगडुओ मा की अप्रतिम सुंदरता को देखकर वह चकित था लेकिन बिजली की चमक की भाँति राजकुमार को होश आया और उसने वह सीपों वाला जादुई हार उस सुंदरी की ओर फेंका जिसे उसने भट से पकड़ लिया। उस सुंदरी ने राजकुमार से विवाह करने के लिए हामी भर दी और उसके पश्चात वे महल की ओर रवाना हुए। उसके प्रभाव ने और उसकी सुंदरता ने दरबार को महिमामान कर दिया।

अपने पिता की सम्पत्ति को पुनः प्राप्त कर लेने व स्वर्ग की अप्सराओं में से सबसे सुंदर अप्सरा को पत्नी के रूप में पा लेने के कारण नगका दसी ने सोचा, 'मेरा साम्राज्य मेरे पिता के समय के साम्राज्य से विशाल और सम्पन्न हो गया है अतः मुझे इस उपलब्धि का उत्सव मनाना चाहिए।'।

अपने सेवक की एवं अपने भाईओं की सहायता से राजकुमार ने संसार के सभी कोनों में निमंत्रण भिजवाए। खेल की प्रतियोगिता के लिए सभी राजाओं व राजकुमारियों को शिष्टाचार पूर्ण ढंग से संदेश लिखे हुए निमंत्रण पत्र भिजवाए जो संदेश इस प्रकार थे, 'कृपया अपने सर्वश्रेष्ठ घोड़ों को लेकर आएँ, ऐसे घोड़े जो आकाश में पक्षी की तरह उड़ सकें' और 'जो नदी में मछली की तरह तैर सकें', एवं 'जो इस प्रकार सरपट दौड़ सकें जिस प्रकार घास के मैदानों में हवा बहती है। पत्रों में यह भी लिखा था कि यदि आप विजयी होते हैं तो मैं आपको सौ अन्य घोड़े इनाम में प्रदान करूँगा जो कि तेजस्वी एवं शानदार हैं।

तिब्बत के आसपास के राजा व राजकुमारियाँ राजा नकगा दसी के अस्तबल के सौ घोड़ों को जीतने के उद्देश्य से कुछ ही दिनों में इकट्ठे होने लगे। मेहमानों का स्वागत करके एवं उन्हें भोज प्रदान करके राजा ने यह घोषणा की कि प्रतियोगिता कल प्रातः ही प्रारम्भ होगी।

बड़े आदर के साथ उस यौवना राजकुमारी ने उस दौड़ से अपना नाम वापस ले लिया। केवल चार दिशाओं के चार राजा ही उस प्रतियोगिता को पूर्ण कर पाए। राजा बदा होर, राजा नंगसी ल्हा और राजा शिंगलिंग त्सा को अब राजकुमार के विरुद्ध दौड़ करनी थी। राजकुमार अपने प्रिय घोड़े जागर ल्हेकिन पर चढ़कर आया। जब दौड़ प्रारम्भ हुई तब एक घोड़ा पलक भ्रपकते ही शुरू से अंत तक तेजी से दौड़ा परंतु वह घोड़ा दक्षिण के राजा से सम्बंधित था जिसने पुरस्कार जीता था। चूँकि इस प्रतियोगिता को एक अतिथि ने जीता था अतः कोई भी नगका दसी पर अभद्र होने का आरोप नहीं लगा सकता था। राजा के आतिथ्य सत्कार से

प्रसन्न होकर सभी अतिथी की हँसी दरबार में गूँज उठी जिससे राजा का और भी सम्मान बढ़ गया था ।

अतिथियों के सम्मान में भोज रखा गया, मेजबान एवं मेहमान दोनों ने ही अपने हृदय की अभिलाषा पूरी करते हुए साथ में नाच-गान किया । सब लोग अपने-अपने जीवन में प्रसन्न थे । राजकुमार को अपने सेवक की कही हुई बात का स्मरण हुआ, अच्छे लोगों को उनके कर्मों का अच्छा ही फल मिलता है । 'उसने अपने आपको बुद्ध के आगे समर्पित कर दिया । उसने अपने गोद लिए हुए भाईओं के साथ निस्पक्षता से व्यवहार किया एवं अपनी पत्नी को बहुत प्यार व आदर दिया । अपने सभ्य आचरण का उसे फल प्राप्त हुआ और राजकुमार ने सदा ही नेक बने रहने की प्रतिज्ञा ली ताकि भगवान बुद्ध का आशीर्वाद उसे हमेशा प्राप्त होता रहे ।

Three Princes

In the four cardinal directions were four kings: King Nangka Wa in the east, King Bada Hor in the south, King Nangsi Lha in the west, and King Shingling Tsa in the north. Of these, King Nangka Wa was the most powerful and wealthy. He had 7,700 sheep, 5,500 yaks, and 3,300 horses.

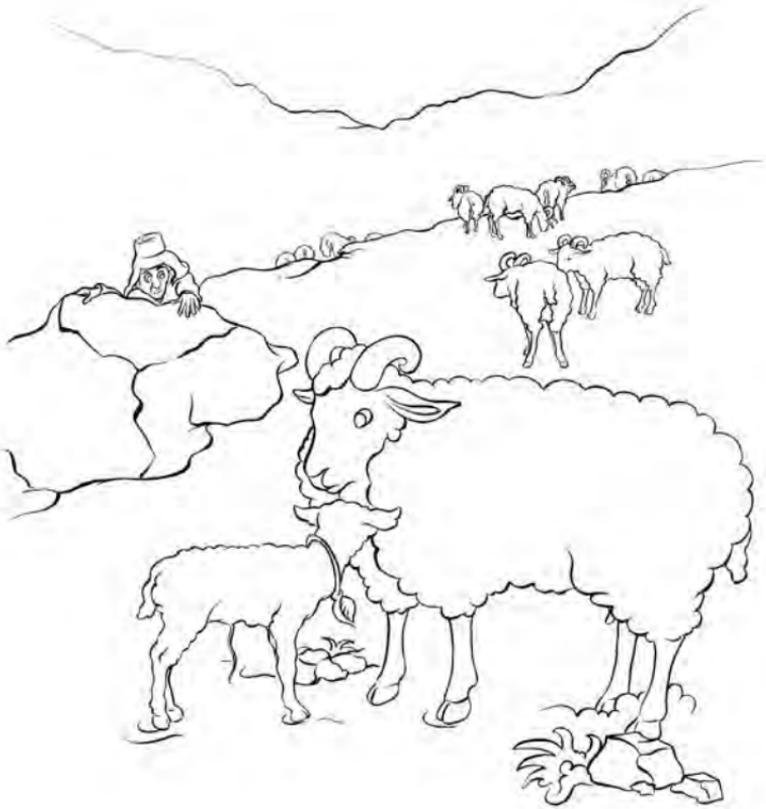
Nangka Wa has a son named Nangka Dsi, whose mother died when he was three years old. The king raised the child by himself and had a very hard time of it. One day, he thought, 'It will be very difficult for my son to grow up alone. I must find playmates for him.' So he took his son, a bag of gold and another of silver, and set off to buy a friend for his son.

The king and his footman Koryu Senge Rabdhan reached a place called Chisha Gyamo. There, they met an old woman with two boys.

'Can you please sell your boys to me? I have a son who has no brothers. I can pay you one bag of gold and one bag of silver, and the three boys can look after each other for the rest of their lives,' the king said.

The old woman replied, 'I cannot sell you these children. But please look away, and then turn back again.'

The king looked away, and turned back again. The old woman had vanished, but the two boys remained. Although the old woman wasn't there, the king left behind the bags of gold and silver and brought the two boys home.



The king now had three sons: his prince, and the two boys. One boy was named Chibun Dayu Tribung, and the other was named Luphun Norbu Tsenba.

The king treated the two boys as his own children, and they also loved him like their own father. He taught them to be loyal, brave and kind. When the prince was seven years old, the king passed away. Overcome with grief, the prince dedicated himself to the Buddha.

Soon, the king's wealth decreased. Of the 7,700 sheep, only seven remained; of the 5,500 yaks, only five remained, and of the 3,300 horses, only three remained. Luphun Norbu Tsenba became very worried. He said to his brother and the footman, 'Our father left us 7,700 sheep, but now only seven remain. I will find a fertile pasture where I can increase the flock. Take good care of the prince.'

Sometime later, Chibun Dayu Tribung said to the prince, 'Our father left us 3,300 horses, of which only three remain. I will find a place with plenty of water and grass to increase their number.' He asked the footman to take good care of the prince, and left on his quest.

The prince stayed home with his footman and the five yaks. He took care of the yaks and worked hard. After a few years, the five yaks increased to over 5,000. The footman said, 'Prince, this is a good sign. Good people are always rewarded.'

The Prince replied, 'We have plenty of livestock. But I miss my brothers. I want to know how they are. Please find them and bring them home regardless of how many sheep and horses they have now.'

Koryu Senge Rabdhan, the footman, obeyed the prince and left to find the other two brothers. When he reached Chisha Gyamo, at just the spot where the old king had found playmates for the prince, he found a flock of sheep

numbering far more than 7,700. He wondered whose flock of sheep they were, and, thus wondering, lay down to rest.

Just at that moment, a ewe gave birth to a lamb covered with spots all over its body and wearing a conch necklace. The little lamb asked his mother, "There are so many other little lambs in the East Kingdom, but I am the only one born with a conch necklace. Why is that so?"

The ewe replied, 'Soon, many fairies will gather to bathe in the lake near Chisha Gyamo. Of them, the fairest is named Lhamo Tongduo Ma. She can be caught only with your conch necklace. And if she marries the Prince, it will be the greatest luck and brightest joy for all of the East Kingdom.'

Then, suddenly, she became alert and said softly, 'But son, there is a man here who understands our tongue. We must run away.'

Indeed, the footman Koryu Senge Rabdhan understood the language of the sheep. He jumped at the newborn lamb and captured the conch necklace and hid it in his felt hat and set off before the hooves of 7,000 sheep could trample him into the dust.

Very soon, the footman ran into Luphun Norbu Tsenba and gave him the prince's message. Luphun Norbu Tsenba said, 'Alright. I am coming home. But you should find Chibun Dayu Tribung and bring him home.'

The footman walked further on and tracked down Chibun Dayu Tribung, who was sitting inside a tent of black wool, but with just one horse lazily grazing outside the tent. Disguising his disappointment with the utmost good sense, Koryu Senge Rabdhan said to him, "The prince now has over 5,000 yak, and Luphun Norbu Tsenba now herds over 7,000 sheep. The wealth of your father is sufficiently restored. Come, let's go home.'

Chibun Dayu Tribung sprang up, as if he had been waiting for just this news, and said, 'Yes! Let's go home right now.' He raced off on his only horse towards a rock that shimmered as if covered all over with feathers. Koryu Senge Rabdhan hurriedly followed. When they reached the feathery rock, Chibun Dayu Tribung said, 'Goddess Pacha! Please open the door for me.' He then clapped three times.

The rock opened up slowly. Inside the rock were more than 3,300 fine horses. Chibun Dayu Tribung led his father's horses out of the cave and said to the footman, 'Let's go now. The other horses will follow.'

After traveling some distance, riding the horse Chibun Dayu Tribung had given him, Koryu Senge Rabdhan turned back to look at the cave. All the horses were following them at a respectable distance. And what splendid colors they were! From the black of a midnight in the forest, to the white of mare's milk, there were horses of every color. What a wonderful sight it was!

Each of them was received warmly by the prince, and they lived together in their father's kingdom. The prince sat on a golden throne, Chibun Dayu Tribung sat on a silver throne and Luphun Norbu Tseba sat on a copper throne. They ruled the kingdom together. But the court didn't have a queen to increase its beauty. And the prince wasn't yet a king because other kings hadn't seen his wealth and power.

Koryu Senge Rabdhan, the trusted footman, remembered the conversation between the ewe and her young lamb. 'Take this conch necklace and catch yourself a fairy for a bride!' he suggested.

Although his brothers laughed at Koryu Senge Rabdhan, the prince said, 'Koryu Senge Rabdhan has always been loyal to us. He has never told a lie. If he says so, I will

travel with the conch necklace to the land he describes, and see what happens.’

The prince set off with the conch necklace. When he reached the lake described to him, the prince saw many fairies swimming in the lake. Because the prince was a mortal, the smell of his body scared the fairies playing in the water. They suddenly flew away. But the fairest fairy of them all, Lhamo Tongduo Ma, remained behind, half in the lake, and half out of the water.

For half a moment, the prince forgot why he had traveled to the lake. He was blinded by Lhamo Tongduo Ma’s beauty. But, like a flash of lightning, the prince regained his wit and threw the magical necklace around the fairy and caught her. Lhamo Tongduo Ma agreed to marry him and return with him to the palace. Her beauty and her virtues brought glory to the court.

Having regained the wealth of his father, and having found the fairest of the heavenly fairies as a wife, Nagka Dsi thought, ‘My kingdom is more prosperous than it was in my father’s times. I must celebrate this achievement.’

With the help of his footman and his brothers, the prince sent out invitations to all known corners of the world, inviting kings and princes to come to a tournament. ‘Bring your best horses,’ the invitation said in polite language, ‘Bring horses which can fly like a bird in the sky, or which can swim like a fish in the river, or which gallop like the wind sweeping over the grassland. If your horse wins the race, I will reward you with a hundred more horses that are just as magnificent.’

Kings and princes from across Tibet gathered within a few days to win a hundred horses from the prince’s stable. After welcoming the guests and serving them a feast, the prince announced that the race would start early in the morning.

Out of respect, the young prince's brothers did not participate in the race. Only the four kings of the four directions would compete. King Bada Hor, King Nangsi Lha, and King Shingling Tsa would race against the prince. The prince rode Zagar Lheqin, the old king's favorite horse. When the race began, the horses flew from start to finish in the time it takes for the eyes to blink. But it was the horse belonging to the King of the South which won the prize. Because a guest had won the competition, nobody could accuse Nagka Dsi of being ungracious. The laughter of guests enjoying his hospitality brought much honor to the house of the prince.

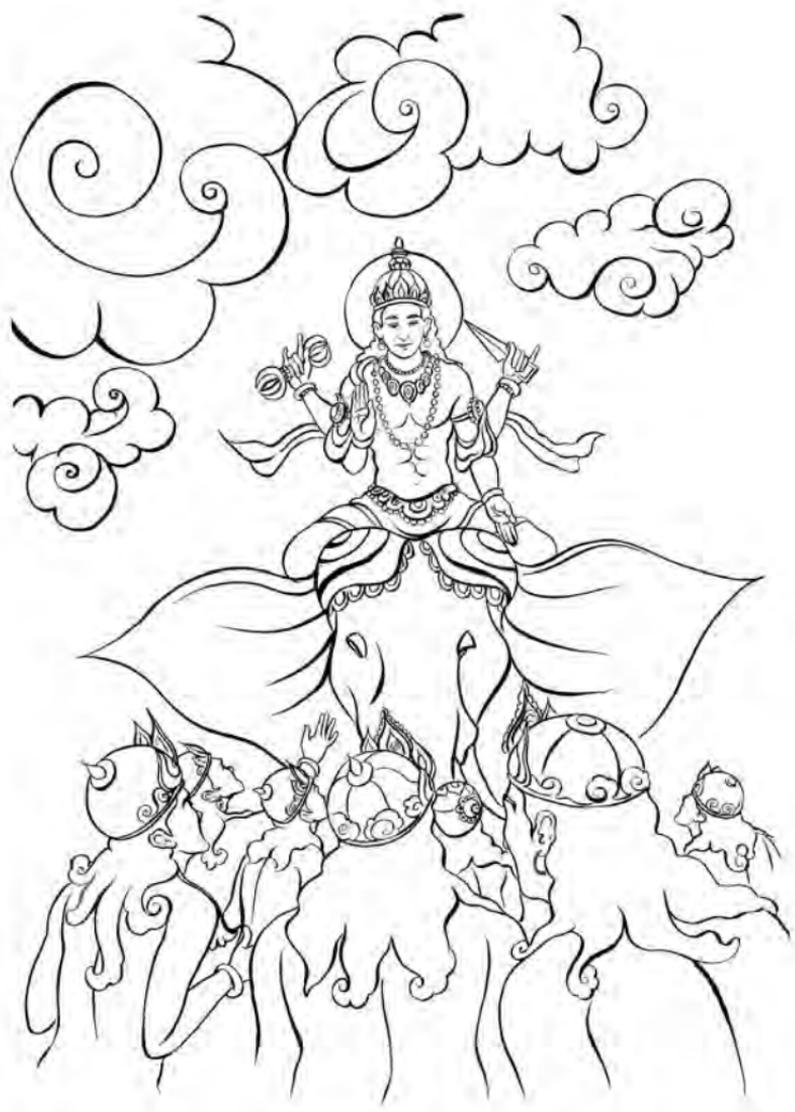
At the feasts held in honor of the guests, the host and his guests sang and danced and ate to their heart's desire. Everybody was very happy with their lives. The prince remembered what his footman had said – 'Good people are always rewarded.' He had devoted himself to the Buddha, treated his adopted brothers fairly, and shown respect and love to his queen. He was being rewarded for his good conduct. The prince vowed to always be virtuous so that the Buddha would always bless him.

देवभूमि

हुमला नेपाल के नक्शे में ऊपर की ओर बायीं तरफ स्थित है। इसके उत्तर में नगरी प्रांत है जो कि चीन के स्वायत्त प्रदेश तिब्बत में पड़ता है और इसके पश्चिम में उत्तराखंड है जो कि भारत का एक राज्य है। पवित्र नदी करनाली का उद्गम भी तिब्बत ही है जहाँ से वह हुमला होते हुए दक्षिण दिशा की ओर स्थित भारत में बहने वाली महान नदी गंगा में जा मिलती है। यह सुंदर घास के मैदान, बर्फ से ढकी हुई चोटियों और सीधे ढाल वाले पहाड़ों से घिरा हुआ है। हुमला में बौद्ध, बोनपो और हिंदू धर्म के लोग रहते हैं। यहाँ पर रहने वाले लोगों में कुछ किसान हैं, कुछ व्यापारी हैं जिन्होंने भारत के समतल प्रदेश ऐतिहासिक रूप से तिब्बत के माध्यम से सिल्क रूट से जोड़ दिया है।

हुमला अपनी कथाओं के लिए प्रसिद्ध है। प्रत्येक गाँव के पास अपने पूर्वजों और देवताओं को पूजने के लिए अपने-अपने स्थान हैं। हुमला में रहने वाले हिंदू बारह देवताओं की पूजा करते हैं जिनके नाम हैं - रामपाल, हरीपाल, घंटापाल, बनपाल, मधुपाल, शंखपाल, कालशीलता, गुरा, बेटाल, शुक्लहंसा, दाह-मश्तो और दूध-मश्तो एवं भवानी जो कि इन देवताओं की बहन है और जिसकी भी हिंदुओं द्वारा पूजा की जाती है। शेष बचे लौहासुर, ल्हांगो, हरकी इत्यादि उन बारह भाईयों के भतीजे हैं।

हुमला के प्रत्येक गाँव में भिन्न-भिन्न देवों की समाधियाँ हैं। सिमिकोट और थेहे जैसे बड़े गाँवों के पास दूसरे गाँवों से अधिक देवों की समाधियाँ भी होती हैं। जो भी देवी या देवता मनुष्य योनि में जन्म लेता है वह धामी घोषित किया जाता है। दूसरे व्यक्ति को डाँगरी बनाने के लिए तैयार किया जाता है जो कि देवताओं की प्राचीन भाषा समझ सकता है व बोल सकता है। डाँगरी गाँव के सभी लोगों की अभिलाषा व प्रार्थनाओं का धामी के समक्ष अनुवाद करता है जिससे धामी अवचेतन की अवस्था में चला जाता है एवं सारी प्रार्थनाओं को सुनता है। डाँगरी हुमला गाँव के लोगों के लिए देवताओं की कही हुई बातों का अनुवाद भी करता है।



देवताओं के समय में जब समय भी वास्तविकता से परे था, उन सभी बारह देवताओं ने कैलास पर्वत और मानसरोवर भील की रचना के बारे में सुना था। उन्होंने अपने सबसे बड़े भाई इंद्र से स्वर्ग के स्वामी के बारे में पूछा क्योंकि उन्हें पवित्र धर्मस्थलों की यात्रा करने की अभिलाषा थी। अतः वहाँ जाकर उन्होंने पवित्र मानसरोवर के पानी में स्नान किया और कैलास पर्वत के चारों तरफ सृष्टिकार की स्तुति करते हुए चक्कर लगाए। लेकिन अपनी यात्रा से लौटते समय एक डाँगेचिन नाम के राक्षस ने उन्हें पकड़ लिया। सभी देवों को उस राक्षस की सेना से लड़ते-लड़ते एक हजार वर्ष बीत गया तब कहीं जाकर वे उसे हरा पाए। उन्होंने उसके सिर को उसके शरीर से कई किलोमीटर दूर फेंक दिया। तिब्बत के तकलाकोट के आसपास की मिट्टी उस राक्षस के रक्त से लाल हो गयी थी।

सभी देव इंद्र के पास वापस लौटे और बोले, 'हम सब एक हजार वर्ष से भूखे हैं। हमें खाने के लिए खाद्य एवं पेय पदार्थ चाहिए।'

इंद्र ने उत्तर में कहा, 'हुमला चले जाओ और दुष्ट आत्माओं को दंड देकर व अच्छे कामों को पुरस्कृत करके मेरी शासन व्यवस्था को संरक्षित करो तब लोग तुम्हें बलि अर्पित करेंगे और अपनी पैदावार का कुछ हिस्सा तुम्हें दिया करेंगे। उन लोगों को मवेशी व बाल-बच्चे प्रदान करो और उन्हें बीमार बना दो, जब वे तुमसे उनको स्वस्थ कर देने की प्रार्थना करेंगे और तुम्हें खाद्य व पेय पदार्थ अर्पित करेंगे तब तुम उन्हें स्वस्थ बनाकर उनके कष्ट दूर कर देना !'

इस बात ने उन सभी देवों को खुश कर दिया। वे स्वर्ग से नीचे उतरकर हिल्सा में स्थित नौमुले पहुँचे। उन्होंने पवित्र बसंत के नौ फव्वारों में स्नान किया और हुमला के विभिन्न गाँवों में बस जाने के लिए नाचते हुए हुमला की ओर प्रस्थान किया। वे धामी के माध्यम से नाच-गा रहे थे और इंद्र के निर्णय का पालन कर रहे थे। इसके बदले में हुमला के लोगों ने उन्हें बलि व अन्न अर्पित करते हुए उनकी प्रशंसा में गीत गाए और उन देवों के सामने अपने सदा ही अच्छे व भले मन के बने रहने की और हमेशा बुरे व्यवहार से दूर रहने की प्रतिज्ञा की।

हुमला के दक्षिण भाग में स्थित जुमला में एक शक्तिशाली राजा का साम्राज्य था। वह भगवान विष्णु का ही अवतार था। उसने हुमला में धामियों के द्वारा किए जाने वाले चमत्कारों के बारे में सुना हुआ था जिसके कारण हुमला के लोगों ने दान व भेंट का चलन प्रारम्भ किया था। धामी एवं डाँगरी के माध्यम से देवताओं के साथ वार्तालाप कर पाने के कारण गाँव के लोगों द्वारा उन्हें आधा किलो धान अर्पित किया जाना राजा को नापसंद था जिसके कारण वह अप्रसन्न था। राजा का

यह विश्वास था कि केवल एक शासक ही सभी प्रकार के करों को प्राप्त कर सकता है एवं सभी प्रकार की भेंटों को ग्रहण करने का अधिकार रखता है ।

वह राजा और भी क्रोधित हो उठा जब उसे पता चला कि हुमला के देवता अच्छे व्यवहार वाले को पुरस्कृत कर रहे थे और बुरे व्यवहार वाले को दंडित कर रहे । उसका यह मानना था कि एक राजा ही न्याय का निर्णय कर सकता है । हुमला गाँव में हर जाति व कुल के आदमी व औरत प्राचीन नियमों के अनुसार ही रहें, इस बात का उन देवों ने अत्यधिक खयाल रखा था । समाज के भीतर लोगों को बहुत ध्यान से वर्गीकृत किया गया था जो किसी भी कीमत पर बदला नहीं जा सकता था । देवों के अवतरण के अनुसार ही धामी ने इन नियमों को लागू किया था ।

अतः जुमला के उस क्रोधी शासक ने हुमला के धामियों को कैद करने के लिए अपने भयानक सैनिकों को भेजा और वे धामियों को उसके दरबार में लेकर आए । हुमला के धामियों के कथनानुसार विष्णु के अवतार ने देवताओं के अवतार को गिरफ्तार कर लिया ।

राजा उन धामियों पर गरजते हुए बोला, 'मेरे राज्य के लोगों के बीच में रहने की स्वीकृति और मेरी प्रजा द्वारा प्रदान की गयी भेंटों को ग्रहण करने का अधिकार तुम्हें किसने दिया?'

'हमारे भाई इंद्र ने हमें हुमला भेजा था । उन्होंने ही कहा था कि हम हुमला की जनता पर राज कर सकते हैं ।'

धामियों ने देखा राजा अभी भी क्रोधित ही था अतः उनमें से एक धामी ने अपने शरीर में रहने वाले देवता की शक्ति दिखाने के लिए मुट्ठीभर जौ अपने हाथ में लिया और उसे काले चूर्ण में बदल दिया ।

परंतु विष्णु का अवतार होने के कारण वह राजा भी अभूतपूर्व क्षमताओं से पूर्ण था अतः उसने भी जौ को अपने खाली हाथ से काले चूर्ण में बदल दिया ।

राजा ने गुस्से में एवं अत्यंत अहंकार भरे स्वर में दहाड़ते हुए कहा, 'तुम मुझे इन तुच्छ दौंव-पैवों की चुनौती देने का गलती से भी प्रयास मत करना ।' असल में वह धामियों के मुख से यह सुनना चाहता था कि वे उस राजा के आगे वे कमजोर व गुणहीन हैं ।

तभी दूसरा धामी उठा और उसने मट्टिभर जौ अपने हाथ में उसे लाल चूरे में बदल दिया । यह देख उस अभिमानी शासक ने भी यही किया । फिर अगले धामी ने मट्टिभर तिल के बीजों को अपनी हथेली में भींच कर उसे रगड़ा और उसकी मुट्ठी से तेल बहने लगा । राजा यह देखकर मुस्कराया और अपनी मूँछों को ताव देते हुए अपने खाली हाथ से तिल के दानों में से तेल निकाल कर दिखाया ।

धामी ने एक बड़े पत्थर को उठाया और अपनी दैवीय शक्ति से उसे धूल में बदल दिया परंतु राजा ने भी उसकी देखा देखी करते हुए यही किया ।

‘बस ! बहुत हुई तुम्हारी चालें ! तुम देवताओं की आवाज हो, यह दावा करना बंद करो ! तुम्हारे पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है जो मेरे पास ना हो ! तुम्हें अब न्याय का अनुरक्षण करना और लोगों द्वारा प्रदत्त भेंटों को ग्रहण करना बंद करना पड़ेगा !’ ये कहते हुए जुमला का राजा हुमला के धामियों पर जोर से चिल्लाया ।

परंतु धामी अभी भी अपनी शक्तियों का प्रदर्शन किए जा रहे थे । उन्होंने ताँबे के एक बड़े बर्तन में तेल गरम करके उसे उबाला और उनमें से एक धामी उस तेज उबलते हुए तेल को इस प्रकार पी गया जैसे कि मानो वह किसी ठंडी शीतल भील का पानी हो । यह देख उस राजा ने तेल के उस गरम बर्तन को उठाया परंतु उसे पी पाने का वह साहस नहीं उठा पाया ।

अखिरकार उस राजा को अपनी पराजय स्वीकार करनी पड़ी और वह धामियों से बोला, ‘तुम मुझसे अधिक शक्तिशाली हो अतः तुम हुमला में देवों की वाणी बनके रह सकते हो । विष्णु का अवतार होने के नाते मैं तुमसे बड़ा हूँ, अतः तुम्हें हुमला में मेरे बनाए नियमों को अपनाना चाहिये । मेरे नियमों के अनुसार तुम अच्छे व बुरे व्यवहार करने वाले व्यक्तियों को दंडित व पुरस्कृत करो । तुम किसी को भी चोरी, डकैती और व्यभिचार करने की व धोखाधड़ी करने की अनुमति नहीं दोगे ।’

धामी के माध्यम से देवता ने कहा, ‘हम तुमसे छोटे हैं और तुम हमसे बड़े हो । हम लोगों को प्राचीन नियमानुसार ही दंडित व पुरस्कृत करेंगे । हम मानसरोवर के पवित्र पानी में स्नान करेंगे और पवित्र कैलास पर्वत की परिक्रमा करके उसका सत्कार करेंगे । जो चीज हमसे सम्बंधित ना हो उसे हम कभी भी ग्रहण नहीं करेंगे ।’

तब से हमेशा के लिए जुमला विष्णुभूमि के नाम से जाना जाता है जहाँ राजा के नियम अपनाए जाते हैं,

और हुमला, जहाँ धामियों ने देवताओं के नियमों को अपनाया उसे देवभूमि के नाम से जाना जाता है जहाँ देवों का निवास है ।

Godsland: Devbhumi

Humla is at the top left corner of Nepal. To its north is the Ngari province in the Tibet Autonomous Region of China, and to its west is Uttarakhand, a state in India. The river Karnali originates in Tibet, flows through Humla, and travels south into India to join the river Ganga. Buddhists, Bönpos and Hindus live here. Great snowcapped peaks, beautiful grasslands and steep mountains are seen in Humla. Some people are farmers, and some are traders who have historically connected the plains of India to the Silk Route that passed through Tibet.

Humla is rich in stories. Every village has sacred spaces where ancestors and gods are worshipped. The Hindus of Humla worship the twelve gods, namely Rampal, Haripal, Ghantapal, Banpal, Madhumpal, Shankhapal, Kalshilta, Gura, Betal, Shuklahansa, Daarhe-Mashto and Dudhe-Mashto. Bhawani, who is their sister, is also worshipped. Others like Lauhasur, Lhango and Harki are nephews of the twelve brothers.

Each village in Humla has shrines for various gods. Big villages like Simikot or Thehe may have more gods than other villages with fewer gods. Each god or goddess is born in human form as a *dhami* shaman. Another person trains to become the interlocutor *dangri*, who speaks the ancient language of the gods. The *dangri* translates the prayers and



wishes of the people for the gods, who take their *dhami* into a trance and listen to prayers. The *dangri* also translates the speech of the gods for the people of Humla.

In the time of gods, before time had become real, the twelve gods heard about the creation of the Mount Kailas and the Lake Manasarovar. They asked their eldest brother Indra, who was the king of the heavens, for permission to visit the sacred pilgrimage sites. They bathed in the holy lake and walked around the holy mountain and sang praises of the Creator. But on the way home, they were captured by the demon of Dangechin. The gods fought the demon's army for a thousand years before defeating him. They threw his head many kilometers away from his body. The soil around Taklakot in Tibet turned red from the demon's blood.

The gods returned to Indra and said, 'We have been hungry and thirsty for a thousand years. Give us food and drink!'

Indra replied, 'Go to Humla. Protect my rule there by punishing evil and rewarding good deeds. So that the people may offer you sacrifices and a part of their harvest, bless them with children and cattle, or make them ill. When they pray to you and offer you food and drink, heal their diseases!'

This pleased the gods. They descended from heaven to Naumule, in Hilsa. After bathing in a holy spring with nine fountains, they danced into Humla to live in various villages. They danced and sang through their *dhamis* and kept the law of Indra. In exchange, the people of Humla sang their praise, offered sacrifices and grains, and promised to be good.

A powerful king ruled over the empire of Jumla, which is to the south of Humla. He was the incarnation of Vishnu. He heard of the miracles being performed in Humla by the *dhamis*, for which the people of Humla made offerings. The half-kilo of rice offered to *dhamis* and *dangris* for making it possible to

talk to the gods also made the king angry because he believed that only a king could collect taxes and accept offerings.

The king became even angrier when he heard that the gods of Humla also rewarded good behavior and punished bad behavior, because justice could come only from the king. The gods made sure that men and women, and people of each caste, lived according to ancient rules. Everybody had a place in the hierarchy of society, which could never change, no matter what happened. As incarnations of the gods, the *dhamis* enforced these rules.

So, the angry king of Jumla sent his fearsome soldiers to arrest the *dhamis* of Humla and bring them to his court. Or, as the *dhamis* of Humla say, Vishnu's incarnation arrested the incarnation of the gods.

'Who gave you permission to live among my people? Who gave you the right to take offerings from my subjects?' the king growled at the *dhamis*.

'Our brother Indra sent us to Humla. He said we could rule over the people of Humla.'

When the *dhamis* saw that the king was still angry, one of them took a fistful of barley and crushed it into black powder to show the power of the god who lived in his body.

But the king was also full of great power as the incarnation of Vishnu. He also crushed barley into black powder with his bare hand.

'You dare challenge me with these simple tricks?' the king roared in anger. He was proud, and he wanted the *dhamis* to say that they were weak and worthless.

Another *dhami* took a fistful of barley and crushed it into red flour. The haughty king did the same. Next, the *dhami* crushed a fistful of sesame seeds until oil flowed from his fist. The king laughed and twirled his moustache, and he also made oil from sesame with his bare fist.

The *dhami* grabbed a rock and crushed it with divine power into dust, but the king also did the same.

‘Enough of these tricks!’ the king of Jumla shouted at the *dhamis* from Humla. ‘You will stop claiming that you are the voice of the gods! You don’t have any power that I don’t have. You will stop accepting offerings and dispensing justice!’

But the *dhamis* hadn’t finished showing their strength. They heated oil in a large copper pot. Once the oil boiled, a *dhami* drank the hot oil like it was water from an ice-cold lake. The king lifted the hot pot of oil, but he didn’t have the courage to drink it.

‘You do have powers greater than mine,’ the king finally accepted defeat. ‘You may rule in Humla as the voices of the gods. I am the incarnation of Vishnu. Therefore, I am your elder. So, you shall keep my laws in Humla. You shall reward good deeds and punish evil deeds according to my laws. You won’t allow anyone to commit adultery or theft, or to deceive anybody.’

‘You are the elder, and we are the younger,’ said the gods through the *dhamis*. ‘We shall reward and punish according to the ancient laws. We shall bathe in Manasarovar and pay our respects to Kailas by walking around the sacred mountains. We shall never accept anything that doesn’t belong to us.’

Forever since then, Jumla has been known as *Vishnubhumi*, where the king’s laws apply. Humla, where the *dhamis* uphold the rules of the gods, is known as *Devbhumi*, or, the land of gods.

चतुर पूर्वज

ऐतिहासिक कहानियों में हमेशा से ही राजाओं व शासकों की लड़ाईयों के विवरण मिलता है परंतु इसके अलावा अमीर-गरीब, बलवान-कमजोर, औरत व आदमी जैसे बहुत से और भी विषय रहें हैं जिनके बारे में किसी भी प्रकार की कोई कहानी का विवरण इतिहास में प्राप्त नहीं होता है। पुरानी कथाओं में जब दो राजा आपस में युद्ध किया करते थे तो सैनिक व ग्रामीण लोग ही होते थे जो युद्ध में एक-दूसरे से लड़ते हुए अपनी जान गवाँ बैठते थे परंतु उन सैनिकों व गाँववालों के बारे में कहीं कोई कथा नहीं मिलती है।

२०० वर्षों से भी पहले मध्य नेपाल में स्थित गोरखा सेना ने गढ़वाल के गाँवों पर आक्रमण किया जो कि हिमालय के दक्षिण दिशा में पड़ता है और जहाँ पहुँचने के लिए कैलास से कई दिनों तक पैदल सफर तय करना पड़ता है। वहाँ पर सिरदांग नामक एक शांतिपूर्ण गाँव था जिसमें खेती करने वाले किसान एवं व्यापारी रहते थे। उन सभी को हमेशा इस बात का भय लगा रहता था कि ना जाने कब उन पर आक्रमण हो जाए। गोरखा सेना वहाँ अनाज व पशुओं की लूटपाट करती और गाँवों को जला के तबाह कर देती। इस कारण से गोरखा सेना बहुत ही बदनाम थी। यहाँ तक की कुछ सिपाहियों को तो ये तक लगता था कि यदि युद्ध करते समय वे मृत्यु को प्राप्त हो जाए तो ये उनके लिए सौभाग्य की बात होगी। इसीलिए कभी कभी तो वे इसलिए लोगों की हत्या कर दिया करते थे ताकि वे युद्ध में उनका स्थान बना रहे और जिससे ये संदेश जाए कि उन्हें मृत्यु का भय नहीं है।

सिरदांग के रंग जाति के लोगों में से एक वृद्ध बुद्धिमान व्यक्ति था जिसके बहुत सारे बच्चे और पौत्र पौत्रियाँ थे जिन्हें वह बहुत प्रेम करता था और उनकी सुरक्षा करना चाहता था ताकि उसकी संतति आगे चलकर उसके अच्छे कर्मों को याद रखे और अपने पूर्वज की स्तुति कर सके। वह सोचता था की यदि उसकी संतान भली भाँति उसकी कीर्ति का गुणगान



करेगी, उसकी स्तुति करेगी तो शायद किसी दिन वह स्वयं देवता योनि में सम्मिलित हो जाए और उसे देवताओं की तरह पूजा जाए ।

अपने चातुर्य से उसे ऐसा आभास हुआ की सिरदांग में रखे हुए ढेर सारे अनाज, ऊन, हष्ट-पुष्ट पशु व तिब्बत में व्यापार करने के पश्चात एकत्र हुए सिक्कों पर गोरखाओं की नजर है और वे जल्दी ही सिरदांग पर आक्रमण करने वाले हैं ।

उस वृद्ध व्यक्ति ने गाँव के लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा, 'गोरखा सेना आएगी और जिस प्रकार वे निर्दयी व क्रूर हैं उसी प्रकार अत्यधिक लालची भी हैं अतः हमें अपनी जान बचाने के लिए भाग कर ऊँची पहाड़ी पर बने किले पर चले जाना चाहिए ।' सभी गाँव वालों ने उस वृद्ध की बात मानते हुए अपने परिवार व सम्पत्ति को एकत्रित किया और पास ही एक पहाड़ी पर बने किले की ओर भाग गए ।

गोरखा सेना का एक सेनापति जिसकी बहुत बड़ी दाढ़ी थी, अपने क्रूर सैनिकों के साथ हाथ में घुमावदार तलवार लिए व गैंडे की खाल से बने कवच को पहने हुए सिरदांग गाँव में आक्रमण करने के लिए आया । उसने देखा कि पूरा का पूरा गाँव खाली था । सभी घर पूर्ण रूप से साफ-सुथरे थे परंतु उन्हें उन घरों में ना ही कोई पशु मिले, ना कोई स्वर्ण और ना ही कोई अनाज । तभी गोरखा सेनापति को ऊँचाई पर एक किल्ला दिखाई दिया और उसे समझते देर ना लगी । उन्होंने सभी सैनिकों को ले कर उसने उस किले की ओर कूछ किया ।

सिरदांग गाँव के कुछ निशस्त्र लोगों की टुकड़ी किले के बाहर अपने साथ बसंत ऋतु का टंडा व मीठा पानी लिए बैठे हुए थे । जैसे ही वे सैनिक ऊपर चढ़े उन गाँववालों अपनी मधुर मुस्कान के साथ उनसे कहा, 'तुम चढ़ाई करने के कारण काफी थके हुए मालूम होते हो', और गोरखा सेना व उसके सेनापति को पानी पिलाया । कहीं वे सैनिक पानी विश हो ने का संदेह ना करें इसलिए उस वृद्ध व्यक्ति ने सबसे पहले स्वयं आगे बढ़कर वह पानी पिया ।

फिर उस वृद्ध ने पूछा, 'तुम यहाँ क्यों आए हो सेनापति? तुम्हारा घर शायद एक महीने की पैदल यात्रासे भी ज्यादा दूर है । तुम्हारी पत्नी तुम्हारे लिए बहुत चिंतित होगी !'

सेनाध्यक्ष ने उस वृद्ध आदमी की ओर सन्देहात्मक रूप से देखते हुए कहा, 'मैं गोरखा के राजा का गुप्तचर हूँ । मैंने ही उसके राज्य का विस्तार किया है और इसीलिए मैं तुम्हारे गाँव को लूटने के लिए आया हूँ ।'

तभी पीछे से एक सैनिक गुर्राते हुए बोला, 'और लोगों को मारने के लिए' सेनापति ने उसे गुस्से से घूरा । वह सैनिक ना तो बहादुर था और ना ही बुद्धिमान अतः वह शांत हो गया ।

वृद्ध व्यक्ति ने उनसे कहा, 'युद्ध करने की क्या आवश्यकता है ! भीतर आओ, कुछ देर आराम कर लो । हम लोग शांतिप्रिय लोग हैं और इस रक्तपात से बचने के लिए जो भी आप चाहो वो हम आपको दे देंगे । हमारे गाँव के देवों को उत्पात व उग्र व्यवहार पसंद नहीं है ।

ये सुनते ही वह सेनाध्यक्ष उपहास करने के ढंग से हँसने लगा । अपनी क्रूरता सिद्ध करने के लिए उसने कई आदमी, औरत व बच्चों को मार डाला था और कई गाँवों को जला कर रख कर दिया था । वह प्रसन्न था कि अंत में उसने अपने भय से लोगों को डरा दिया था । अपनी मूँछों को घुमाते हुए उसने किले में प्रवेश किया ।

गलीचे व याक के बालों से बने कम्बलों की एक लम्बी कतार बाहर बिछी हुई थी और ताम्बे के बने कटोरों में से ताजा-ताजा पकाया हुआ माँस और उसकी वसा की चमक बाहर झलक रही थी । वहीं एक कोने में जौ से बनी शराब रखी गयी थी । एक नवयुवक मुस्कराते हुए खड़ा हुआ और माँस व शराब परोसने के लिए आगे बढ़ा ।

इससे पहले की सेनाध्यक्ष कुछ कह पाता उसके सभी सैनिक नीचे बैठ गए और शराब व बकरे के भूने हुए कलेजे का स्वाद लेने लगे । वे खूब चटखारे ले लेकर खा रहे थे यहाँ तक कि खाते समय उनके मुख से लार भी टपक रही थी ।

यह सब देखकर सेनापति ने कहा, 'ठीक है ! ठीक है ! ज्यादा मत खाना क्योंकि अभी हमें इन गाँववालों को लूटना भी है ।

लालची गोरखा आवाज करते हुए जल्दी जल्दी खाना निगलने लगे । माँस की वसा के निशान उनकी मूँछों पर भी लग गए, उनकी दाढ़ी से शराब टपकने लगी और जल्दी ही वे सभी नशे में धुत्त हो गए ।

सेनापति का एक सहायक थोड़ा टहल कर आने का बहाना बनाते हुए दरवाजे तक पहुँच गया । वृद्ध बुद्धिमान व्यक्ति को आभास हुआ कि सेनापति को यह मालूम पड़ने लगा है कि वह उन गोरखाओं को बे वकूफ बना रहा है अतः वह चोरी-छिपे दरवाजे के पीछे अंधेरे में जाकर छुप गया ।

और वह सहायक जो स्वयं सूचना देने के उद्देश्य से दरवाजे तक टहलने गया था, शराब पीने के कारण एक तरफ झुक गया था और उसके सोचने की शक्ति भी धीमी पड़ गयी थी । जैसे ही वह गोरखाओं की आँखों से ओझल हुआ दरवाजे के पीछे छिपे वृद्ध व्यक्ति ने अपने एक हाथ से उस सहायक की गर्दन पकड़ी और दूसरे हाथ से कमर को जकड़ा । उसने गोरखा सेनापति के उस सहायक को हवा में उछाला और हवा में ही घुमाते हुए उसे एक सीधी चट्टान के ऊपर फेंक दिया जहाँ से वह अंधेरे में कहीं उड़ गया ।

भीतर सेनाध्यक्ष अपने सहायक के लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था। प्रतीक्षा करते-करते वह दूसरा कटोरा मॉस भी चट कर गया और शराब का दूसरा गिलास भी पी गया और अंत में दूसरे सहायक के कान में फुसफुसाते हुए उसे बाहर जाकर पता लगाने के लिए आदेश दिया।

चतुर वृद्ध व्यक्ति ने उस दूसरे सहायक को भी गर्दन और कमर से पकड़ते हुए उसे हवा में घुमाते हुए चट्टान के ऊपर फेंका जहाँ से वह भी अंधेरे में उड़ता चला गया। इसी प्रकार हर पाँच-दस मिनट में कोई एक गोरखा सैनिक आता और वह वृद्ध व्यक्ति प्रत्येक सैनिक को इस प्रकार मार फेंकता कि वे अंधेरे में उड़ते चले जाते।

अंततः गोरखा सेना के सेनापति ने मध्यरात्रि में किले के भीतर चुपके से भाँक कर देखा तो उसने पाया कि उसके सबसे बेहतरीन सैनिक वहाँ से गायब हो चुके हैं। जो शेष बचे थे वे कुछ दुर्बल व नशे में धुत थे और कुछ तो उनके सेनापति की ही भाँति कायर ही थे। वहाँ पर गोरखा सैनिकों की तुलना में रंग जाती के लोगों की संख्या अधिक थी। जब गोरखा सेनाध्यक्ष को यह समझ आया कि किस प्रकार सिरदांग गाँव के शांतिप्रिय व मेहमान नवाज गाँववालों ने अपने चातुर्य से उसे पराजित कर दिया है, वह वहाँ से भाग निकलने के लिए दरवाजे की ओर दौड़ा परंतु वह इतनी तीव्रता से उछला कि सीधे ही दरवाजे से बाहर आकाश के अंधेरे में कहीं बाहर उड़ गया। उस वृद्ध चतुर व्यक्ति को उसे बाहर फेंकने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी।

सिरदांग के नीचे की ओर वाली घाटी में बहुत अंधकार था और वहाँ गोरखाली सैनिक अभी भी आकाश में गोल-गोल उड़ रहे थे। पूरी रात वे आधार में उड़ते हुए एक दूसरे से टकराते रहे और सूर्योदय के समय उनके शरीर के विभिन्न अंग, दाढ़ी, दाँत, पेट व उनके हथियारों के भुंड भूमि पर गिरने लगे। वे इस प्रकार गुच्छे में बंधित थे कि पहले उन्होंने ने एक दूसरे को सुलभाया और फिर वहाँ स्थित सभी सैनिकों की गिनती की। उन्होंने ऊपर पर्वत पर स्थित सिरदांग गाँव की ओर देखा और भय से काँपने लगे।

सेनापति का पहला सहायक ने धीमी आवाज में कहा, 'वह शराब बहुत अच्छी थी।' वह सबसे लम्बे समय तक आकाश में गोल-गोल घूमता रहा था। अतः उसकी दाढ़ी के बाल पूर्वी सिरदांग से बहुत दूर उसके गाँव गोरखा की दिशा की ओर मुड़ गए थे।

'मॉस भी बहुत स्वादिष्ट था, 'गोरखा सेनाध्यक्ष ने अत्यंत दुःख के साथ कहा क्योंकि उससे उसका एक दोस्त बिछड़ गया था और उसके बाद शर्म से सिर भुकाते हुए वे सभी सिरदांग से चले गए।

उनके जाने के बाद सिरदांग के गाँववालों ने उस वृद्ध व्यक्ति को बहुत प्यार से भोजन प्रस्तुत किया और उसे सम्मानित करने के लिए उसे

एक सफेद पगड़ी पहनायी । उसने अपनी चतुरता से रक्तपात को रोका था, बाहर वालों के समक्ष अपनी मेहमान नवाजी के कर्तव्य का पालन करने के लिए वह सम्मानित हुआ और गोरखाओं को उड़ा-उड़ा कर बाहर फेंक देने के कारण उसे बहादुर होने का गौरव प्राप्त हुआ । आज भी उसके वंश के लोग उसका सम्मान करते हैं और यदि अधिक से अधिक लोग उसकी बुद्धिमानी एवं चातुर्य की प्रशंसा व उसका आदर करेंगे तो क्या पता किसी दिन वह देवताओं की श्रेणी में सम्मिलित हो जाये ।

The Clever Ancestor

Until recently, history spoke only of kings and their wars instead of recording the stories of everyone, rich and poor, strong and weak, man and woman. In older histories, when two kings fought, the soldiers and villagers were forgotten. But it was the villagers and soldiers who fought and lost their lives.

More than two hundred years ago, an army from Gorkha, in central Nepal, attacked villages in Garhwal, which is many days' walk from Kailas, due south of the Himalayas. There, farmers and traders of a peaceful village called Sirdang were worried about being attacked. The Gorkhas had a bad reputation: they would loot the grains and cattle and burn down villages. Some soldiers even believed that dying in battle was a good idea. They would kill unnecessarily just to remind themselves that they were not afraid to die.

Among the Rung people of Sirdang was a wise old man with many children and grandchildren whom he loved. He wanted to protect his family so that they would remember his good deeds and praise him as their ancestor. If enough of his progeny praised him, he might even become a god someday!

Through his wisdom, he realized that the Gorkhas would attack Sirdang for the abundant grains, fine wool, fat cattle and coins gathered through trade in Tibet.



‘We must flee to the hilltop fort to survive,’ the old man told the villagers. ‘The Gorkhas will come, and their greed is as vast as their cruelty is deep.’ The villagers collected their wealth and families, and fled to a fort at the top of a nearby hill.

A bearded Gorkha commander, carrying a curved sword and a round rhinoceros-skin shield, marched into Sirdang with his cruel soldiers. The village was empty. Although the houses were pretty and clean, there was no grain, gold or cattle in them. The commander saw the fort on top of the hill and took his men there.

A group of unarmed men from Sirdang waited outside the fort with cool, sweet water from a nearby spring. ‘You must be tired after climbing up,’ they said with kind smiles on their faces, and offered water to the commander and his soldiers. The wise old man drank the water first to show the Gorkhas that they didn’t need to fear being poisoned.

‘Why have you come here, commander?’ the old man asked. ‘Your home is a month’s walk away, perhaps more. Your wife must be worried!’

The commander looked at the old man with suspicion. ‘I am the emissary of the king of Gorkha. I expand his empire, and am here to loot and pillage your village.’

‘And kill,’ a soldier growled, but became quiet when the commander glared at him. This soldier wasn’t very intelligent or brave.

‘There is no need for war!’ the old man said. ‘Come inside. Rest for a while. We are a peace-loving people. We’ll gladly give you what you need if we can avoid bloodshed. The gods of our village dislike violence.’

The commander grinned. He had burned many villages and killed many men, women and children to build a reputation for cruelty. Finally, somebody was afraid of him. He twirled his moustache and entered the fort.

A long line of mats and yak-hair blankets had been laid out. Freshly cooked meat glistening with fat waited in copper bowls. Large pots of millet beer sat in a corner. Smiling young men stood ready to serve meat and beer.

Before the commander could say anything, his soldiers sat down and quickly took a sip of beer or bit into a nice piece of roasted goat liver. They smacked their lips and salivated.

‘Alright, alright!’ the commander said. ‘Don’t drink too much, because we still have to loot and plunder.’

The greedy Gorkhas started gobbling down the food. The fat from the meat stained their moustaches and beer dribbled down their beards. Soon, they became drunk.

From a secret door in the back of the fort, the Rung people of Sirdang were quietly escaping one by one. The elderly and the children went first, followed by young men and women. When the wives started leaving, their heavy necklaces of silver and gold coins jangled and alerted the Gorkha commander. He leapt up from his seat and rushed to the door.

‘Where is everyone going?’ he shouted.

The wise old man said politely, ‘Your appetite is large, and your men are still thirsty. My people must show hospitality to their guests. Please go back and enjoy the meat and beer!’

The commander realized that the wise old man was fooling him. He pretended to go back and sit with his men. He picked up his bowl of beer and whispered into it just loud enough for his trusted assistant to hear, ‘Pretend to go outside for a walk and see where everybody is fleeing.’

His assistant pretended he was going for a walk and went towards the gate. Now, the wise old man realized that the commander suspected that he was trying to fool the Gorkhas. He sneaked to the outside of the door and hid in the dark.

And, as alert as the assistant may have wanted to be, the beer in his belly made him sway a little and think a bit slower. Once he was out of sight of the Gorkhas, the wise old man grabbed the assistant with one hand on his neck and another by his waist and flung him into the air, spinning away and over a cliff into the darkness.

Inside, the commander waited for his assistant to return. He ate another bowl of meat and drank another bowl of beer, and finally whispered to another assistant to go outside and check.

The old man grabbed the second assistant by the neck and waist and spun him away over a cliff, sending him flying into the dark. A Gorkha soldier came out every five or ten minutes. The old man grabbed each one and sent him flying into the dark.

Finally, just around midnight, the Gorkha commander looked around the room and saw that his best soldiers had disappeared. There were more Rung men around than Gorkhas. The remaining soldiers were feeble and cowardly, just like the commander. When he realized how the peace-loving and hospitable villagers of Sirdang had cunningly defeated him, the Gorkha commander ran towards the door and jumped with so much force that he sailed right into the dark sky. The old man didn't have to throw him over the cliff at all.

There, in the darkness of the valley below Sirdang, the Gorkha soldiers were still spinning and flying in the air. All through the night, they bumped into each other in midair. Slowly, by sunrise, they fell to the valley as a single clump of limbs, beards, teeth, swords and bellies. They untangled themselves and counted each other to make sure everybody was present. They looked up the hill at the beautiful village of Sirdang and shivered with fright.

‘The beer was good,’ the first assistant said in a quiet voice. He had been spinning in the air for the longest, so his beard and hair now pointed straight towards his home in Gorkha, far to the east of Sirdang.

‘The meat was good, too,’ said the Gorkha commander sadly, as if he had lost a dear friend. Then, heads hanging in shame, they walked away from Sirdang.

The villagers in Sirdang served the wise old man with delicious food, put a fresh white turban on his head and praised him. He had been wise to avoid bloodshed, honorable in doing his duty of hospitality towards outsiders, and brave in spinning and throwing away the Gorkhas. He is praised even today by his progeny. If more people praise his wisdom, cunning, and honor, who knows, he may even become a god!

पद्मसंभव और दैत्य शाब्दाग

बहुत समय पहले जब केवल कहानियों के आधार पर ही समय का अनुमान लगा पाना सम्भव था क्योंकि उस युग के अस्तित्व के सभी प्रमाण नष्ट हो चुके थे, उस समय नेपाल के हुमला जिले में स्थित बारख्याड, न्योनद्राड और द्राडसोद के लोग एक शाब्दाग नामक दैत्य के आतंक में रहा करते थे। उसकी उपस्थिति से वहाँ के जंगलों के आसपास के सभी मैदान प्रेतबाधित थे जिसे मी सोल सा अथवा मानव-बलि स्थल के नाम से जाना जाता था।

उस दैत्य के पास बहुत सारी चमत्कारिक शक्तियाँ थी एवं उसे सदा ही लोगों की पीड़ाएँ अत्यंत लुभाती थी क्योंकि उसके अनुसार यही संसार की असल प्रकृति एवं स्वभाव था। उसने कितने ही घरों को पित्रहीन बच्चे व निःसन्तान माताओं के रूदन से भर दिया था। नये बीजों की बुआई के मौसम के समय वह वर्षा को रोक देता ताकि गाँववाले उसके आगे पानी के लिए भीख माँगे और जब ऊवा गेहूँ की फसल परिपक्व होती तो वह मूसलाधार बारिश व ओला-वृष्टि को लाकर फसलों को नष्ट कर देता। कभी कभी वह याक व भेड़ों की टाँगे तोड़ देता और इससे भी दुष्टतर वह उन पशुओं को मार डालता और गाँव वाले अपने मवेशियों को गाँवा बैठते। जिस भेड़ का निधन किसी दुर्घटना वश हुआ हो वह फिर भी ऊनी कपड़े के लिए अथवा गोशत के रूप में प्रयोग की जा सकती है परंतु जिस प्रकार वह दैत्य उन भेड़ों की हत्या कर देता था वह सच में हृदय को पीडा देने वाला नुकसान होता था।

फलतः दैत्य शाब्दाग को खुश करने के लिए गाँववाले प्रत्येक वर्ष एक आठ वर्ष के बालक को घास के मैदानों में छोड़ आते ताकि दैत्य शाब्दाग उसे अपना आहार बना ले उसके पश्चात डर के कारण तीव्रता से अपने घरों में जाकर छुप जाते। शाब्दाग सबसे पहले उस बच्चे के पाँव के पंजे चबाता फिर पैर और उसके बाद अंगुलियाँ, हथेलियाँ, बाजुएँ तथा अंत में पेट को चबाता। भय के कारण गाँव वाले प्रयास करते कि उन्हें हड्डियों के टूटने की व हाड़-माँस के चीरे जाने की आवाज ना सुनाई पड़े। बच्चे



की आँखों को एक-एक करके चूसने से पहले वह दैत्य उस बच्चे के कानों को चबा डालता। जैसे ही वह दैत्य अपना आहार निगलने एवं सुड़कने की आवाज करता, बालक की चीखें व सभी कुछ अचानक से शांत हो जाता। अपने किए गए कृत्य के कारण गाँव वाले एक भारी अपराध बोध से ग्रसित थे एवं स्वयं को बहुत बड़ा अपराधी मानते थे।

इस भयानक आतंक के हजार वर्ष और शायद हजारों-हजारों वर्षों बाद एक ऋषि पद्मसंभव जिन्हें गुरु रिपोचे भी कहा जाता है, बरखांग में प्रकट हुए। अपने साथ वे फूर्वा नामक कटार रखते थे जिससे उन्होंने अज्ञानता का नाश किया था एवं तिब्बत की ओर यात्रा करते समय अपने वास के लिए अंधेरों को दूर भगाया था। उन्होंने पहले से ही बरखांग के एक स्थान पर अपनी प्रबुद्धता के रहस्य को भौंप रखा था जहाँ वे अभी खड़े हुए थे। अगले क्षण होने वाली घटना अथवा अगले घंटे और अगले दिन होने वाली घटना का उन्हें पहले से ही पता था। अतः अपने अंतरमन से उठने वाले प्रश्नों को वे स्वयं में ही उजागर होने देते और अपने स्वयं के द्वारा ही उसे अभिव्यक्त करते।

'दादी ! मुझे बहुत प्यास लगी है। क्या मुझे पीने के लिए पानी मिल सकता है?'

घर के भीतर से एक वृद्ध दादी का क्षीण स्वर में उत्तर आया, 'पोते ! दरवाजे पर रखी चुजुम बाल्टी से पानी ले लो। एक दैत्य ने मुझसे मेरा मानुषिक आकार छीन लिया है और किसी के समक्ष आने में मुझे बहुत लज्जा आती है।'

लेकिन पद्मसंभव ने पहले से ही अपनी दूरदर्शिता से यह देख रखा था अतः वे मुस्कुराए और शिष्टता पूर्वक बोले, 'कोई बात नहीं, दादी ! मुझे घर के अंदर आने की आज्ञा दो और शायद मैं कुछ मदद कर सकूँ।' यद्यपि उस वृद्ध दादी ने आपत्ति दिखाई परंतु उस धार्मिक संत ने स्वयं को भीतर प्रवेश करने के लिए उस वृद्धा को राजी कर लिया।

घर के भीतर अंधेरे में वह वृद्ध दादी ठंडे पड़ चुके चूल्हे के पास भेड़ की खाल से बने कालीन पर लेटी हुई थी। उसके लम्बे बाल थे जो उलझे हुए थे और सर्पों की कुंडली की तरह प्रतीत होते थे। जब पद्मसंभव ने ध्यान से नजदीक जाकर देखा तो पाया कि वे बाल किसी मानव नहीं अपितु किसी अन्य जीव से सम्बंधित थे। बालों के वजन ने उस वृद्धा को दबाया हुआ था और अंधेरे में वे दिखाई नहीं पड़ते थे। किसी तरह पद्मसंभव के हाथों में बालों की एक लड़ आ गयी और उसे घुमाते हुए वे उसकी गैद बनाने लगे।

उस समय पद्मसंभव तीनों बाख्यांड, न्योनद्राड व द्राडसोद के गावों के दर्जनो भिन्न घरों में खड़े हुए थे और प्रत्येक घर से वे उस जादुई

बाल को जिसने लोगों को दबा कर रखा हुआ था एवं जिसने लोगों की मानवीय आकृतियाँ गायब कर दी थी, उसे खींच कर गोल-गोल घूमाने लगे। प्रत्येक घर में उस बाल का पीछा करते-करते पद्मसंभव ने नदियों को पार किया एवं ऊँची-ऊँची चोटियों पर चढ़ाई की। अपने पैर के अगले भागों को मोड़-मोड़ कर काँटेदार भाड़ियों से गुजरते हुए एवं पर्वतों के बीच के सँकरे भागों में उड़े। उन्होंने देखा कि कभी-कभी जमीन गहरे खर्राटों से हिल जाती थी जिसका पीछा करते हुए वे अंततः लूंगफुंग पहुँच गए जो कि पहाड़ों के बीच की एक छोटी सी घाटी है जहाँ उन्हें वह विशाल दैत्य शाब्दाग दिखाई दिया। वहाँ वो अपने स्वयं के उलभे बालों की लटों की चटाई के ऊपर लेता हुआ था और उसी के बने कम्बल के नीचे सो गया। उसे स्वप्न में खूब सारा रक्त व माँस दिखाई दिया, आतंक की खूब सारी चीख पुकारें उसके अंदर आनंद जगा रही थी।

पद्मसंभव छल्लाँग लगा कर शाब्दाग के सिर पर कूदे और अपनी कटार से उस दैत्य के सिर पर रखते हुए चिल्लाए, 'हे शापित प्राणी ! जाग ! बोध प्राप्ति के लिए जाग !'

पद्मसंभव की प्रतिभा एवं बल ने शाब्दाग को क्रोध से भर दिया। उसने अपने चौड़े जबड़े फैलाए और पद्मसंभव को निगल गया।

पद्मसंभव ने शाब्दाग के पेट को चीर दिया और उसकी छाती पर चढ़ गए जहाँ दो लड़ाकू साँड जितने बड़े आकार का हृदय क्रोध में धड़क रहा था। पद्मसंभव ने उसके हृदय को पकड़कर मरोड़ दिया। जिसके पश्चात शाब्दाग सिर्फ तीन सौ विद्यार्थी की क्षमता वाले मठ से भी बड़े फेफड़ों के द्वारा ही साँस ले पा रहा था। पद्मसंभव ने पहले उसके एक फेफड़े को निचोड़ डाला फिर दूसरे को तत्पश्चात उसके गुर्दे, फ्लीहा निर्दोष जिगर व भूखी आँतों को तोड़-मरोड़ दिया।

शाब्दाग दर्द से दहाड़ मारने लगा। अपने दर्द से मुक्ति पाने के लिए वह घुटनों के बल नीचे भुका और पहले उसने पूरी नदी को पिया फिर एक बड़ी भील को पिया। उसने पद्मसंभव के पेट को अपने दाँत से कुचलने का प्रयास किया परंतु पद्मसंभव लगातार अपनी कटार से उसके अंगों पर प्रहार करते रहे। दैत्य शाब्दाग ने आवेग में एक ऊँचे घास के मैदान को खरौंच डाला और एक पहाड़ी ढाल को छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित कर दिया। शिलाखंड व चट्टानें बहती हुई घाटी में नीचे की ओर गिरने लगी। दर्द के कारण वह विकृत हो गया था एवं उसी पीड़ा में उसने एक पूरे जंगल को नष्ट कर दिया परंतु वे रहस्यमयी संत उस दैत्य के पेट के भीतर से भी जोर-जोर से हँस रहे थे जिसके कारण शाब्दाग को और भी अधिक पीड़ा हो रही थी।

अपने दुश्मन पद्मसंभव को बेहोश करके मार देने के लिए शाब्दाग ने

चीड़ के जंगल को एवं बड़े शिलाखंडों निगल लिया परंतु पद्मसंभव ने उन शिलाखंडों को व्यवस्थित करके उससे एक भट्टी बनायी और उसमें चीड़ की लकड़ियों को जला दिया। लकड़ियों के कारण बनी आग की लपटों की वजह से उस दैत्य को और भी अधिक असहनीय दर्द होने लगा।

उसने दहाड़ते हुए कहा, 'कौन हो तुम? और तुम क्या चाहते हो?'

'मैं प्रकाश को प्रकट करने वाला और अंधेरे को निष्कासित करने वाला हूँ। मेरा नाम पद्मसम्भव है। यदि तुम मुझे वचन दो कि तुम अबोध बच्चों को खाना एवं इन गाँवों के लोगों को परेशान करना बंद कर दोगे तो मैं तुम्हें इस दर्द से मुक्त कर दूँगा।'

शाब्दाग ने कराहते हुए कहा, 'नहीं, नहीं, नहीं! यह मेरा क्षेत्र है और यही हमारी परम्परा है। मेरे लोगों द्वारा दी गयी बलियों और इन भयभीत पुकारों के अतिरिक्त मेरा कोई अस्तित्व नहीं है।'

पद्मसंभव ने कहा, 'रक्त के बदले लोगों द्वारा दूध स्वीकार करो, माँस के बदले लोगों द्वारा अर्पित किया गया अनाज स्वीकारो। तुम्हारे भय से नहीं अपितु तुम्हारे प्रति आदर व अनुकंपा पूर्ण भाव से लोग तुम्हारे साथ रहें।'

असहनीय पीड़ा से कराहते हुए एवं पराजित होकर अंततः शाब्दाग सहमत हो गया। तभी पद्मसंभव उस दैत्य के मुख से बाहर उड़ आए एवं अपने चमत्कार से उसके भीतर के घावों को भर के उसे स्वस्थ कर दिया जिससे उसका दर्द गायब हो गया। जिन बालों ने सभी गाँव वालों को अपने नीचे दबाया हुआ था एवं अपना गुलाम बनाया हुआ था, वे भी गायब हो गए थे और सभी लोग इस पीड़ा से मुक्त हो गए थे।

शाब्दाग ने प्रतिज्ञा करते हुए पद्मसंभव से कहा, 'अब मैं अपने लोगों को, उके बच्चों व मवेशियों एवं उनकी फसलों किसी को कभी भी नुकसान नहीं पहुँचाऊँगा और सदा उनकी सुरक्षा करूँगा।'

इसके बदले मैं पद्मसंभव ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, 'अकाल व सूखे को समाप्त करने के लिए वर्षा करो, खेतों में प्रचुर मात्रा में पैदावार हो और निःसंतान लोगों को संतान प्राप्ति का आशीर्वाद दो। यह भूमि तुम्हारी है अतः इसके संरक्षण का उत्तरदायित्व भी तुम्हारा ही हो!'

इस प्रकार वह निर्दयी दैत्य शाब्दाग का संत पद्मसंभव के द्वारा उद्धार हो गया क्योंकि एक दैत्य भी प्रभुद्धता को प्राप्त करने की क्षमता रखता है। अब शाब्दाग रक्त के बजाय दूध का आहार करता था एवं आठ वर्षीय बालक के माँस के बदले आटा जिसे द्रांग्या कहा जाता है, स्वीकार करता था। इसी के साथ दर्द व दुर्भाग्य समाप्त हुआ एवं चारों ओर सम्पन्नता व आनंद फैल गया। कई शताब्दियों पश्चात शाब्दाग-भूमि का स्वामी-सम्मान पूर्वक भिबदग रिपोचे के नाम से जाना जाने लगा जो उस भूमि के एक प्रिय देव है और लोग आज भी आदर पूर्वक उनकी आराधना करते हैं।

The Hungry Ogre

So long ago in the past that only in stories can we imagine the time, the people of Barkhyang, Nyiondrang and Drangshod in Humla of Nepal lived in terror of an ogre called Shabdag. He haunted the forests around the meadow called the Mi Sol Sa, or the human-sacrifice site.

The ogre had magical powers and a great greed for the suffering of people because he thought that was the true nature of the world. He filled homes with the cries of fatherless children and childless mothers. He stopped the rains and forced the villagers to beg him for water during the season to sow new seeds. He destroyed crops by bringing hailstorms when the ears of the *umma* wheat ripened. He broke the legs of yaks and sheep, or worse, he made them disappear. A sheep that dies in an accident can be fleeced and butchered, but a sheep that is lost is truly a heartbreaking loss.

Therefore, to keep Shabdag happy, the villagers brought an eight-year-old boy each year to the meadow and left him to be eaten by Shabdag. Then they hurried to their homes to hide in fear. Shabdag ate first the feet, then the legs, the fingers, palms, arms and the stomach of the boy. The villagers tried not to listen to the crunch of bones and the tearing of flesh. Shabdag chewed off the boy's ears before sucking out his eyes one by one. But only after he slurped and swallowed the boy's screams did everything became quiet, then the villagers felt a heavy guilt oppress them.



After a thousand years of this terror, or maybe even a thousand such thousand years, the sage Padmasambhava, also called Guru Rinpoche, found himself in Barkhang. He carried his *phurva* dagger with which he had destroyed ignorance and expelled darkness from many other settlements on his journey towards Tibet. The enlightened mystic had already seen himself in Barkhang in an earlier vision, standing exactly at the spot where he stood now. He knew what would happen in the next moment, and in the next hour and the next day. So he let the question form itself and be expressed through him:

‘Grandma! I am thirsty. May I have water?’

From inside the house came an old grandmother’s feeble reply, ‘Grandson! Pour yourself some water from the *chuzum* bucket by the door. My human shape has been taken away by an ogre, and I am too ashamed to show myself to anybody.’

But Padmasambhava had also seen this in his vision, so he smiled and said gently, ‘No matter, grandma! Let me come inside and see if I can help.’ And, although the old grandmother protested, the mystic convinced her to invite him inside.

In the gloom of the house the grandmother lay on a sheepskin rug by a hearth that had gone cold. Her hair was long and matted and alive, like a coil of serpents. When Padmasambhava looked closely, he saw that the hair belonged to another creature. The hair strangled the grandmother, and swept away into the darkness. Padmasambhava caught hold of one strand of hair and started rolling it into a ball.

Or, at that very moment, Padmasambhava was standing in a dozen different houses in the three villages of Barkhyang, Nyiondrang and Drangshod, and from each house he was rolling the magical hair that strangled people and took away their human forms. Following the hair from each house, Padmasambhava crossed rivers and climbed

over cliffs, scraped his shins on thorny scrubs and flew over deep gorges. He saw the ground shake subtly with deep snores and followed the sound to finally reach Lungphung, a small valley in the inner mountains where he saw the giant ogre Shabdag. He lay on a large mat of his own coiled and matted hair, and he slept under a blanket of his own coiled and matted hair, and dreamed of more blood and flesh, more screams of terror to bring him joy.

Padmasambhava leapt onto Shabdag's head, brought down his dagger on the ogre's head and shouted, 'Wake up, you cursed creature! Wake up to the light!'

The force and brilliance of the dagger made Shabdag jump up in anger. He opened his jaws wide and swallowed Padmasambhava.

Padmasambhava tore through Shabdag's stomach and climbed to his chest where a heart as large as two fighting bulls was beating angrily. He grabbed the heart and twisted it. Shabdag breathed through a pair of lungs larger than a monastery with three hundred students. Padmasambhava first squeezed one lung, then the other. He twisted the kidneys and spleen, the blameless liver and the hungry intestines.

Shabdag roared in pain. He knelt and drank first a stream, then a lake, and then a large river to take away the pain. But Padmasambhava kept jabbing at the ogre's organs with his dagger. Shabdag desperately scratched at a high meadow, making the mountainside crumble. Boulders and rocks rained into the valley below. He tried to crunch Padmasambhava in his belly. He writhed in pain and destroyed a forest. But the mystic in his stomach only laughed louder and louder.

Shabdag swallowed a forest of pines to knock Padmasambhava unconscious, and he swallowed large boulders to crush his enemy. Padmasambhava arranged the

boulders into a stove and lit pine logs to build a large fire.

‘Who are you?’ Shabdag roared. ‘What do you want?’

‘I am Padmasambhava, the bringer of light and expeller of darkness. I will take your pain away if you promise to stop eating innocent children and stop troubling the people of these villages.’

‘No, no, no!’ Shabdag whined. ‘This is my land, and these are our traditions. I am nothing without the offerings and terrified praises from my people.’

‘Let them offer you milk instead of blood, and grains instead of flesh. Let them live with compassion and respect for you instead of fear,’ Padmasambhava said. Defeated and suffering unimaginable pain, Shabdag finally agreed. Padmasambhava flew out from his mouth and healed him from the inside, so that the pain disappeared. The hair that had strangled the villagers and kept them enslaved also disappeared and the villagers were liberated.

‘I promise to never bring suffering to my people and forever protect them, their children and cattle, and their crops,’ Shabdag promised.

In exchange, Padmasambhava blessed him, ‘Bring rain to end droughts, bless the fields with plentiful harvests, and grant children to the childless. Live as the protector of these lands!’

In this manner, the ferocious ogre Shabdag was tamed by the mystic Padmasambhava. Because even a demon can attain enlightenment, the Shabdag began to accept milk instead of blood and a figure of dough, called the Drangya, instead of the flesh of an eight-year-old boy. Pain and misery ended and prosperity and joy began. After many centuries, the Shabdag – the lord of the land – was respectfully called the Zhibdag Rinpoche, the precious deity of the land where he is still worshipped and respected.

पुचावा सेलजोंग

तिब्बत के स्वायत्त प्रांत में एक दूर के गाँव नगरी में एक युवती रहती थी। यह वह समय था जब लोग जादू-टोने में अत्यधिक विश्वास रखते थे। कैलास पर्वत की प्रतिष्ठा में पड़ने वाला उस नवयुवती का गाँव बड़ा निर्धन था। यद्यपि वह राजा के किले से काफी दूर रहती थी परंतु फिर भी वह पूरे तिब्बत में प्रख्यात थी। उसने एक जादुई पक्षी की खाल को अपने वश में कर रखा था। जब भी कभी वह उस खाल को पहनती थी तो वह एक दिव्य पक्षी का रूप धारण कर लेती थी जो दुष्ट आत्माओं से लड़ने की क्षमता रखती थी। वह पुचावा सेलजोंग के नाम से जानी जाती थी और कभी कभी लोग उसे पक्षी की खाल पहनने वाली लड़की के नाम से भी पुकारा करते थे।

पुचावा सेलजोंग के गाँव का राजा को घोड़ों की दौड़ का बहुत शौक था। प्रत्येक साल वह समरकंद व भूटान जैसे दूर के देशों से बहादुर व शक्तिशाली राजाओं को अपने-अपने घोड़ों के साथ दौड़ की प्रतियोगिता के लिए निमंत्रित करता था। अफगानिस्तान व भारत के गुप्तचर भी कभी कभी उस प्रतियोगिता में इस जिज्ञासावश हिस्सा लेते थे ताकि वे जान सकें कि किसके पास श्रेष्ठतम जंगी घोड़े हैं।

उन दिनों में प्रतिद्वंद्वी राजा एवं व्यापारी अपने दुश्मनों का सफाया करने के लिए दुष्ट आत्माओं और चुड़ैलों की सहायता माँगते थे। राजा ने अपनी आयोजित प्रतियोगिताएँ एवं उस्तवों की सुरक्षा की दृष्टि से पुचावा सेलजोंग को एक संदेश भिजवाया।

संदेश में लिखा था, 'राजा ने तुम्हें किले पर बुलवाया है। पुचावा सेलजोंग ने अपने गाँव के सभी बड़े-बुजुर्गों से सलाह-मशवरा किया और राजा के किले पर जाने की सहमति भर दी। उसने पक्षी की चमकीली खाल पहनकर दिव्य पक्षी वाला वेश धारण किया। उसके पैर के पंजे बड़े होने लगे, गर्दन पतली व छरहरी हो गयी एवं उसके हाथ चौड़े पंखों में बदल गये। तत्पश्चात् उसने अपने पंखों को फड़फड़ाते हुए एक आकर्षक



उड़ान भरी और शीघ्र की सूर्य की रोशनी को अपने पंखों द्वारा ढकते हुए बादलों की ऊँचाई पर पहुँच गयी। अंततः इससे पहले कि संदेशवाहक राजा के किले तक पहुँच पाता, वो उससे चार दिन पहले ही वहाँ पहुँच गयी।

‘तुम्हारे पास चूड़ैलों और राक्षसों से युद्ध कर सकने की प्रतिभा है अतः तुम सभी दुष्टबलों से घुड़ दौड़ की प्रतियोगिता की रक्षा करोगी’ राजा ने उसे आदेश दिया। पुचावा सेलजोंग ने आज्ञा का पालन करते हुए राजा को नमन किया।

दौड़ के दिन लगभग सौ राजा और उनके हजार सिपाही एवं गाँव के लोग, बच्चे व बौद्ध सन्यासी सभी प्रतियोगिता स्थल में दौड़ देखने के लिए एकत्रित हुए। लोगों ने शर्ते लगानी शुरू कर दी व मदिरा का सेवन किया। इसी प्रकार के माहौल में चारों ओर से दुष्ट आत्माएँ दबे पाँव अंदर घुसती हैं और पुरुष व स्त्रियों के हृदय में लालच, क्रोध व चालाकी भरे विचार भर देती हैं। जब दुष्टता अपने चरम पर होती है तब भाई अपने भाई के ही साथ लूट-पाट करता है, मित्र आपस में भगड़ने लगते हैं, बच्चे अपनी माँ की अवज्ञा करते हैं और आपस में प्रेम करने वाले एक दूसरे के साथ विश्वासघात करने लगते हैं।

परंतु राजा ने पुचावा सेलजोंग को भीड़ के ऊपर ध्यान रखने का आदेश दिया हुआ था अतः जब भी दुष्ट आत्माएँ भीड़ में घुसने का प्रयास करती तो पुचावा सेलजोंग राजा के किले की छत के ऊपर से ही उन लोगों को देख लेती थी। बड़ी शीघ्रता के साथ वह जादुई पक्षी की खाल पहन लेती और एकाएक नीचे की ओर भपट्टा मार कर दुष्ट आत्मा को पकड़ लेती और उसे इतना ऊपर उड़ा कर ले जाती कि सूर्य की चमक उसके पीछे पड़कर उसे बाहर फेंक देती थी या कभी कभी स्वयं वह युवती अपने पंजों से उसके चीथड़े-चीथड़े कर देती थी। यह देख राजा, सिपाही व भीड़ में उपस्थित आदमी व औरत पुचावा सेलजोंग की जयजयकार करते।

पुचावा सेलजोंग की उपस्थिति से राजा की घुड़दौड़ें बहुत सफल रही। साल-दर-साल राजा का खजाना बढ़ता रहा और तब तक बढ़ते चला गया जब तक कीमती रत्नों, स्वर्णों और हाथी दाँत से बनी चीजों के वजन से राजा के किले की दीवार बाहर की ओर उभरने ना लगी। परंतु इस सब के बावजूद राजा के मन में एक नया डर घर कर रहा था, पुचावा सेलजोंग की प्रसिद्धि उससे व उसकी घुड़दौड़ों से कहीं अधिक बढ़ गयी थी। उस अविवाहित युवती जिसने राक्षसों से पक्षी की खाल पहन कर युद्ध किया, उसकी एक झलक मात्र देखने के लिए विभिन्न देशों के राजा व बहादुर व्यक्ति बर्फ जमे घास के मैदान और ठंडे रेगिस्तानों को पार करके आने लगे थे। पृथ्वी के सबसे दूर के कोनों तक में उसकी ख्याति बढ़ चुकी थी। बच्चों को अचम्भित करने के लिए लोग सुंदर पुचावा सेलजोंग की कहानियाँ सुनाते थे।

घुड़दौड़ प्रारम्भ होने के कुछ दिन पहले जब राजा अपना भोजन ग्रहण करके जँघ रहा था, अचानक एक डायन उसके सपने में आयी। राजा ने उससे पूछा, 'तुम क्या चाहती हो?'

'मैं वही चाहती हूँ जो तुम चाहते हो। पुचावा सेलजोंग का घमंड तोड़ने में मेरा साथ दो और मैं तुम्हें वचन देती हूँ कि तुम्हारी दौड़ प्रतियोगिताओं में दूसरी चूड़ैलों व दुष्ट आत्माओं से मैं तुम्हें सुरक्षित रखूँगी।' डायन ने उत्तर देते हुए कहा।

जब राजा की नीद खुली तो उसे अपने बायीं ओर एक चकमक-पत्थर पड़ा मिला जिससे उसे यह पूर्ण विश्वास हो गया कि सचमुच वह डायन उसके स्वप्न में आयी थी।

घुड़दौड़ के दिन जब पुचावा सेलजोंग राजकिले की छत पर चढ़ी और अपने थैले में से पक्षी की खाल निकालने के लिए हाथ अंदर डाला तो उसके अंदर खाल नहीं थी अपितु केवल राख थी। किसी ने उसकी पक्षी वाली खाल को जला दिया था और इसी के साथ उसकी जादुई शक्ति भी नष्ट हो गयी थी। वह घबराते हुए हड़बड़ी में इधर-उधर ढूँढने लगी तभी उसने नीचे भीड़ में राजा को मुस्कुराते हुए पाया।

उसे भीड़ के पैरों की छाया तले एक बड़बड़ाता हुआ सड़ा गुलाब दिखाई दिया जो दृढ़तापूर्वक अधर में लटका हुआ था, यह सब वहाँ एक गंदी डायन की उपस्थिति का सूचक था। हवा में एक सडान्ध फैल गयी थी। पुचावा सेलजोंग ने किले से निकल भागने की बहुत कोशिश की परंतु वही किले की छत पर उस डायन ने उसे पकड़ लिया और उसके हृदय को नोचते हुए जमीन पर फेंक दिया।

'मैं अभी तुम्हें मरने नहीं दूँगी, पुचावा सेलजोंग!' ऐसा कहते हुए वह डायन जोर-जोर से हँसने लगी और भयभीत एवं अचम्भित भीड़ के चारों तरफ उड़ने लगी। 'तीन साल से तुमने मेरी कौम को शिकार बनाया हुआ है। अब इस तीसरे साल में मैं तुम्हारा हृदय चबा जाऊँगी लेकिन तब तक तुम यँ ही इस अकल्पनीय दर्द को भेलो।' ये कहकर वह वहाँ से उड़ कर चली गयी।

सूर्यास्त के समय जब सब लोग अपने मित्रों के साथ भोजन करने के लिए चले गए तब पुचावा सेलजोंग दर्द से कराहने लगी और भगवान से सहायता माँगने लगी। एक युवा धनुर्धर जिसने तीन वर्षों तक उसके व दुष्ट आत्माओं के बीच के संघर्ष को देखा था, पुचावा सेलजोंग की असमर्थता को देखकर व उसके क्रंदन को सुनकर उसे अनदेखा ना कर पाया।

पुचावा सेलजोंग के आगे घुटनों के बल बैठ कर वह धनुर्धर आदर पूर्वक बोला, 'आसमानों की राजकुमारी', मुझे बताओ मैं कैसे इस पीड़ा में तुम्हारी सहायता करूँ !'

उस युवा धनुर्धर के सिर को अपने मुँह के नजदीक लाते हुए पुचावा सेलजोंग बोली, 'उस दुष्ट डायन के पास मेरा हृदय है। राजा ने मेरी पक्षी वाली खाल के साथ-साथ मेरे जादू को भी नष्ट कर दिया है। यदि उस दुष्ट डायन से मुझे मेरा हृदय वापस नहीं मिला तो मैं मर जाऊँगी।' पुचावा सेलजोंग ने उसे यह गुप्त बात भी बतायी कि उस डायन का हृदय कहाँ छुपा हुआ है।

जब से वह दुष्ट डायन पुचावा सेलजोंग का हृदय लेकर खांग रिपोचे के दक्षिण भाग के गगनचुंबी पर्वत की ओर भागी थी तभी से उस धनुर्धर को वह घंटा, महीना, वर्ष सभी कुछ स्मरण था। कुछ महीनों तक वह पैदल चलता रहा, कभी बर्फ वाली चोटीयों पर चढ़ा और कभी जमी हुई भील के पानी में चलता रहा। रात के समय बर्फ में रहने वाले तेंदुओं ने उसको अपना आहार बनाने के लिए उसके मुँह को सूँघा परंतु बहादुर धनुर्धर की हृदय की धड़कन अपने संकल्प हेतु एकदम सुदृढ बनी रही और उस पवित्रता ने उसे उस विपत्ति से बचा लिया।

एक सप्ताह के पश्चात कहीं खुली जगह में चीड़ के जंगल थे, वहाँ उस धनुर्धर को याक की ऊन से भरा तंबू दिखाई पड़ा। तभी उसे एक गंध का स्मरण हुआ और उसे आभास हुआ कि दौड़ वाले दिन वह उस डायन के तंबू के आगे ही खड़ा था।

वहीं से खड़े-खड़े उसने चिल्लाना शुरू किया, 'माता ! माता ! मैं घर लौट आया हूँ ! मैं तुम्हारा पुत्र हूँ !'

तंबू से एक महिला बाहर निकली। कुछ समय के लिए वह विस्मित हो गयी थी क्योंकि उसे याद ही नहीं आ रहा था कि उसका कोई पुत्र है भी या नहीं।

'मैंने अपनी कोख से किसी को भी जन्म नहीं दिया !' अचानक से उस धनुर्धर की ओर अपने लम्बे डेग बढ़ाते हुई वह बोली।

धनुर्धर ने फिर से कहा, 'माँ ! मैं तुम्हारा ही पुत्र हूँ !'

डायन उससे एक इंच की दूरी बनाकर उसके आगे-पीछे घूमते हुए उसके आँखों व चेहरे की ओर देखने लगी। वह यह स्मरण ही नहीं कर पा रही थी कि क्या वह सदा से ही एक दुष्ट आत्मा रही है जो लोगों को मार कर उनका खून पीती है या वह कभी किसी की माता भी थी।

वह उस धनुर्धर चेतावनी देते हुए बोली, 'यदि तुम मेरे पुत्र हो तो यहाँ आओ और तब तक मेरे दूध का सेवन करो जब तक कि तुम्हारा हृदय व फेफड़े फट कर तुम्हारी छाती तक ना पहुँच जाए।

'अवश्य ही माँ !' धनुर्धर ने कहा और डायन के नग्न स्तनों को अपने मुँह में लेकर इस प्रकार अपनी आँखें बंद कर ली जिस प्रकार कोई शिशु संतोषवश अपनी माँ की गोद में दूध पीते समय करता है। पहले वह सोच

रही थी कि धनुर्धर के हृदय को निकाल कर उसे सीख में लगाकर, अग्नि में भून कर फिर उस पके हुए माँस में पत्थर का नमक मिलाकर उसे शाम को खाने में कितना आनंद आएगा तत्पश्चात वह पर्वतों के पीछे ढलते हुए सूरज को देखते-देखते अपने दाँतों में फँसे माँस के टुकड़ों को निकालेगी।

परन्तु वह धनुर्धर पहले पूरे दिन भर एक दुधमुँहे बच्चे की तरह दूध पीता रहा फिर उसके बाद पूरा सप्ताह, फिर एक महीना उसके पश्चात एक साल तक तब अंततः उस डायन की आखें मोह वश गीली होने लगीं और उसे यह भरोसा हो गया कि निश्चित ही वह एक माँ है और निश्चित रूप से वह धनुर्धर उसका बेटा है।

तत्पश्चात धनुर्धर अपनी माँ के लिए जलावन और जंगल से पानी भर के लाया, दुष्ट डायन ने अपने पुत्र के लिए खाना पकाया और उसे प्रेमपूर्वक खिलाया। जब वह शिकार के लिए बाहर जाता तो डायन उसका खयाल रखती कि कहीं उसे किसी प्रकार का कोई नुकसान ना पहुँच जाए। वह सदा ही अपने साथ धनुष व तीर रखा करता था जिससे उसे अपने तीरों को सीधा और पैना करने में सहायता हुई। पूरी शीत ऋतु में वे दोनों अपने शिविर में साथ रहे और फिर बसंत ऋतु में जब तितलियाँ मँडराने लगीं तब वे बाहर सूर्य प्रकाश में बैठते और बातें किया करते थे। मातृत्व का सुख एवं मानुषिक संग ने उस डायन को सहनशील बना दिया था। इसी प्रकार दो-तीन शीत ऋतुएँ निकल गयीं एवं जब तीसरी बसंत ऋतु का आगमन हुआ तब धनुर्धर को याद आया, 'दो दिनों में राजा के किले में घुड़दौड़ होगी' जो कि उसका लक्ष्य था एवं जिसको वह अपने हृदय में हर दिन गिनता रहता था।

उसने डायन के शिविर के आसपास जंगल में तलाश की और उसे एक थैला मिला जो कि भेड़ के पेट से बना हुआ था एवं वह चीड़ के पेड़ की एक शाखा पर लटका हुआ था। वह अंदर से धड़क रहा था। उसे पुचावा सेलजोंग के वाक्य याद थे - थैले में डायन का हृदय है !

रात में सोते समय वह गहरी निद्रा में होने का ढोंग करता रहा, परंतु उसके मस्तिष्क में बहुत हलचल चल रही थी।

भोर होने पर डायन ने उसे उठाया, 'उठ जाओ पुत्र।' उसे एक डोलची देते हुए वह बोली 'थोड़ा साफ पानी लेकर आओ। मुझे खाना पकाने के लिए इसको साफ करना पड़ेगा।' चीनी मिट्टी के बने एक प्याले में वह हृदय स्थिरता पूर्वक धड़क रहा था। हृदय के चारों ओर एक निर्मल प्रकाश था जिस वजह से धनुर्धर को यह पक्का मालूम था कि यह पुचावा सेलजोंग का ही हृदय है।

उस डायन के आवाज लगाने पर धनुर्धर ने आज्ञापूर्ण ढंग से कहा, 'जी, माता !' और डोलची उठाकर तेजी से जंगल की ओर दौड़ा। चीड़ के

पेड़ पर लटके भेड़ के पेट वाला थैला जंगल और तंबू के बीचों बीच था। अपनी गति को रोके बिना ही उसने अपने तीर से भेड़ के पेट के भीतर रखे हृदय की ओर निशाना साधा। फिर दायीं तरफ मुड़ कर दो और तीर उस हृदय में मारे फिर तत्काल ही तंबू की ओर दौड़ पड़ा।

तंबू के मध्य में एक धारदार चाकू लेकर वह डायन पुचावा सेलजोंग के हृदय की ओर रेंगती हुई आगे बढ़ रही थी और तभी उसने दर्द में कराहते हुए पीछे मुड़कर उस धनुर्धर की ओर नफरत से देखा।

वह गुर्राते हुए बोली, 'तुम मेरे पुत्र नहीं हो।' उसके हाथ से चाकू नीचे गिर गया। धनुर्धर ने पुचावा सेलजोंग के हृदय को सफलतापूर्वक उस दुष्ट की पहुँच से बाहर कर दिया था। उस डायन के मुँह से दौंत गिरने लगे, जहाँ वह रेंग रही थी वहाँ उसके बाल गिर गये, उसकी त्वचा सूखने लगी व उसके स्तनों का दूध भी सूख गया।

धनुर्धर शांतिपूर्वक उस डायन से बोला, 'और तुम भी मेरी माता नहीं हो।' दोपहर से पहले ही भेड़ के पेट वाले थैले में रखा उस डायन के हृदय का रक्त सूख गया था और उसने धड़कना बंद कर दिया। साँस की गति धीमी पड़ने के साथ ही एक बड़ी कराह के साथ डायन की मृत्यु हो गयी। धनुर्धर ने पुचावा सेलजोंग के हृदय को उठाया और शीघ्रतापूर्वक पहाड़ों से नगरी की ओर प्रस्थान किया।

उधर राजा के किले से तीन वर्षों से आने वाली दर्द की आवाजें बंद हो गयीं क्योंकि डायन की मृत्यु के साथ ही पुचावा सेलजोंग का दर्द भी समाप्त हो गया था और उसे उसकी जादुई शक्तियाँ पुनः प्राप्त हो गयी थीं। राजा, जो उस समय अतिथियों का स्वागत कर रहा था, अचानक ही उसके सामने पुचावा सेलजोंग प्रकट हुई। जब राजा ने उसका क्रुद्ध चेहरा देखा तो वह डर से काँपने लगा। उस सुंदर अविवाहिता ने पुनः अपने थैले के अंदर हाथ डाला और इस बार अपने थैले में उसे राख नहीं बल्कि अपनी चमकदार पक्षी की खाल प्राप्त हुई।

उस अकृतज्ञ राजा के शरीर को छोटे-छोटे टुकड़ों में चीरने के पश्चात एवं राजा के राजकोष के चीथड़े उधेड़कर वह जादुई पुचावा सेलजोंग पहाड़ों की ओर निकल पड़ी। वह जानती थी कि वह युवा धनुर्धर अपने हाथों में उसका हृदय लिए उसकी ओर तेजी से बढ़ा चला आ रहा है।

Puchawa Selzong

In the age of magic, a young woman lived in a remote village in Ngari Prefecture of Tibet. Her poor village was in the shadows of Mount Kailas. Although she lived far from the king's fort, she was famous throughout Tibet. She possessed the skin of a magical bird. When she wore the skin, she became a heavenly bird that could fight evil spirits. She was known as Puchawa Selzong, or, *the girl who wore the skin of a bird*.

The king who ruled over Puchawa Selzong's village was fond of holding horse races. Every year, he invited brave men and powerful kings from as far away as Samarkand and Bhutan to race against his horses. Spies from empires in Afghanistan and India also attended to see who raised the best warhorses.

In those days, rival kings and merchants sought the help of witches and evil spirits to harm their enemies. To protect the festivals and the races, the king sent a messenger to Puchawa Selzong.

'The king wants you at his fort,' the messenger said. After consulting with the village elders, Puchawa Selzong agreed to travel to the king's fort. She put on the shimmering skin of the heavenly bird. Her feet grew talons, her neck became slender and sleek, and her arms changed into broad wings. With a mighty leap and flapping of her wings she



reached the sky and blocked out the sun. She reached the king's fort four days before the messenger returned.

'You can fight witches and demons, so you will watch over the races and keep away evil forces,' the king commanded. Puchawa Selzong bowed obediently.

On the day of the race, a hundred kings and thousands of soldiers gathered with villagers, monks and children to watch the races. Bets were made and liquor was drunk. At such times, when greed, anger and cunning thoughts multiply in a crowd of men and women, evil creeps out from every corner and enters the hearts of men and women. When evil triumphs, friends fight, brothers steal from brothers, children disobey their mothers, and lovers think of betraying each other.

But the king had asked Puchawa Selzong to watch over the crowds. When evil spirits tried to enter, Puchawa Selzong saw them from her place on top of the roof of the king's fort. She would quickly don the magical bird-skin and swoop down from the sky. She would pick up an evil spirit and fly so high that the brightness of the sun would chase it away. Or, she would tear it apart with her talons. The kings, soldiers, men and women in the audience would cheer for Puchawa Selzong.

The king's races became very successful because of Puchawa Selzong's presence. Year after year, the king's treasury grew richer and richer, until his fort bulged outward at the walls from the weight of the precious stones, gold and ivory in his stores. But a new worry ate away at the king's heart: Puchawa Selzong was more famous now than the king or his races. Emperors and brave men traveled across frozen grasslands and cold deserts to catch a glimpse of the quiet maiden who wore the bird-skin to battle demons. Amazed young children in the farthest corners of the earth heard stories about the beautiful Puchawa Selzong.

As the king dozed off after a large meal a few days before the annual race, a witch appeared to him in his dreams. ‘What do you want?’ the king asked her.

‘I want the same thing that you want,’ the witch said. ‘Help me destroy the arrogant Puchawa Selzong, and I promise to protect your races from other witches and evil spirits.’

When the king awoke, he found a flint-stone and steel in his left fist. He understood that the witch had really visited him.

On the day of the race, Puchawa Selzong climbed to the roof of the king’s fort and reached into her bag for the bird-skin. But she found only ashes in the bag. Someone had burned her bird-skin and, with it, taken away her magic. She looked around puzzled and afraid until she saw the king smile.

From the shadows under the feet of the crowd a foul murmur rose as a sound and solidified midair as the outlines of an ugly witch. A strong, rotten smell filled the air. Puchawa Selzong tried to escape into the fort, but the witch plucked her off the roof of the fort, tore out her beating heart, and cast her down to the ground.

‘I will not let you die yet, Puchawa Selzong!’ the witch cackled as she flew round and round above the terrified crowd. ‘For three years you have hunted my people. I will eat your heart on the third year. But, until then, you will suffer in unimaginable pain,’ the witch said before flying away.

When the sun set and everybody went away to feast with their friends, Puchawa Selzong cried in pain and asked the gods for help. A young archer who had watched her fight evil year after year couldn’t ignore her cries of pain and helplessness.

‘Princess of the skies,’ he knelt before Puchawa Selzong with respect. ‘Please tell me how I can take your pain away!’

‘The witch has my heart, yet she won’t let me die. The king burned my bird-skin, and with it my magic. Unless my heart is returned from the witch, I will die.’ She brought the

young archer's ear close to her mouth and told him the secret about where the witch's heart was hidden.

The young archer memorized the year, month, day and hour that the witch had taken Puchawa Selzong's heart and ran towards the towering mountain to the south of Kang Rinpoche. He walked for a week, climbing walls of ice and wading through frozen lakes. At night, snow leopards sniffed his face to see if they could eat him. But the brave archer's heartbeat was strong with purpose, and that scared away all misfortune.

A week later, in an opening in a pine forest, the archer saw a tent of yak wool. He remembered the smell from the day of the race and realized that he was before the witch's tent.

'Mother!' the archer shouted from where he stood. 'Mother! I am your son! I have returned home!'

A woman came out from the tent. She looked puzzled for a minute. It seemed she couldn't remember if she had a son or not.

'I have never given birth!' she said suddenly, taking a long stride towards the archer.

'Mother!' the archer repeated, 'I am your son!'

The witch hovered an inch away from his face and looked into his eyes. She couldn't remember if she had always been an evil spirit that killed and drank blood, or if she had once been a mother.

'If you are my son, come and drink my milk until your heart and lungs burst in your chest!' she challenged.

'Yes, mother!' the archer said. He took the witch's bared breast and closed his eyes like a baby with its mother. The witch first thought of how much fun she would have skewering the archer's heart and roasting it over a low fire, rubbing rock-salt on the cooked flesh, and eating it in the evening, picking meat from her teeth as she watched the sun set over the mountains.

When the archer kept suckling like a satisfied child first for an entire day, then for a whole week, then for a month and a year, the witch's eyes became wet with tears and she became convinced that she was indeed the archer's mother, and the archer indeed her son.

The archer collected firewood and fetched water for the witch, and the witch cooked for her son and fed him lovingly. When he went out to hunt, the witch watched over him, making sure that no harm came to him. He carried his bow and arrows everywhere, and the witch helped him keep his arrows sharp and straight. They sat together in their tent through the long winters, and when the first butterflies appeared in the spring, they sat out in the sun and chatted. The happiness of motherhood and human company made the witch bearable to look at. The second and third winters passed, and the third spring approached. 'The king will hold his race in two days,' the archer told himself.

He searched the forest around the witch's tent and found a pouch made of sheep-stomach hanging from a high branch on a pine tree. It was beating from within. He remembered what Puchawa Selzong had told him: the bag had the witch's heart!

The archer pretend to sleep soundly that night, but his mind was in turmoil.

'Wake up, son!' the witch said the next morning. She gave him a bucket. 'Fetch some clean water,' she said. 'I will clean this before cooking it!' In a pretty ceramic bowl a heart was beating steadily. The archer knew from the soft light around the heart that it belonged to Puchawa Selzong.

'Yes, mother!' the archer said obediently, took the bucket and ran towards the spring. The pine tree with the sheep-stomach bag was between the tent and the spring. Without breaking his stride, the archer shot an arrow through

the beating heart inside the sheep-stomach bag. He turned right around, shot two more arrows into the heart, and raced towards the tent.

In the middle of the tent, with a sharp knife, the witch was crawling towards Puchawa Selzong's heart. She twisted with pain to turn to look at him with hatred.

'You are not my son!' she growled. The knife in her hand shook. The archer quickly pulled Puchawa Selzong's heart away from her reach. The witch's teeth fell from her mouth; her hair fell on the ground where she crawled. Her skin wrinkled and her breasts ran dry of milk.

'And you are no mother of mine!' the archer said quietly. Just before noon, the witch's heart bled dry in the sheep-stomach bag and stopped beating. The witch died with a horrifying grunt as the breath of life escaped. The archer grabbed Puchawa Selzong's heart and raced away from the mountains towards Ngari.

Far away, in the king's court, the cries of pain that had been ringing out for the past three years suddenly stopped. With the witch's death, Puchawa Selzong's pain had ended, and her magic had been restored. She appeared before the king, who was entertaining his guests. The king trembled when he saw the fierce look on Puchawa Selzong's face. The beautiful maiden once again reached into her bag, and there, instead of ashes, was her shimmering, magical bird-skin.

After tearing the ungrateful king into little pieces, and after ripping out the roofs of the king's treasury and scattering his wealth all over Tibet, the magical bird that was Puchawa Selzong raced away towards the mountains. She knew that a young archer was hurrying towards her, carrying her heart.

About the book

Folk Gods: Stories from Kailas, Tise & Kang Rinpoche emerged out of a three-year project designed and led by the India China Institute (ICI) at The New School in New York City and based on collaboration between The New School and the International Centre for Integrated Mountain Development (ICIMOD). It is the product of a collaborative endeavor with ICIMOD's Kailash Sacred Landscapes Conservation and Development Initiative (KSLCDI), a transboundary conservation and development initiative working to strengthen regional cooperation among China, India and Nepal.

Pasang Yangjee Sherpa, Sagar Lama, Sheetal Aitwal and Tshewang Lama (Chakka Bahadur) collected and retold stories from Humla and Darchula districts in Nepal. Himani Upadhyaya collected stories from the Pithoragarh district of Uttarakhand state in India, with the support and guidance of Shekhar Pathak. Kelsang Chimee collected stories in the Ngari Prefecture of Tibet Autonomous Region in China, with participation from Kunga Yishe.

Additional stories and materials, including photographs, maps, audio recordings and other related information, are publicly available on the India China Institute's website as part of their Sacred Himalaya Initiative, a three-year Luce Foundation funded project exploring religion, nature and culture in the Himalayas. Electronic versions of each language may be downloaded free of cost for personal or educational use from the ICI website at: www.indiachinainstitute.org/sacred-landscapes-book/ and from ICIMOD's website at: lib.icimod.org/record/32580

Mortal Gods

Story by Gokul Singh Tatwal in *Himalayan Dipti*, 28 September, 1987. Sourced and translated into English by Himani Upadhyaya. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

The Clever Ancestor

Collected in Sirdang, Uttarakhand, India by Himani Upadhyaya. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Battle of Brothers

Narrated by Jagdish Singh Hyanki, Chaudans, Uttarakhand, India. Collected and translated into English by Himani Upadhyaya. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

The Fall of the Demoness

Narrated by Dabbale Pariyar of Thehe, Humla, Nepal. Collected by Prawin Adhikari. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Godsland: Devbhumi

Based on conversations with *dhamis* Man Bahadur Shahi, Tul Bahadur Shahi and Suvarna Roka of Humla, Nepal. Collected by Prawin Adhikari. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

The Hungry Ogre

Narrated by Phuntsok Dorjee, Nyimatang, Humla, Nepal. Collected and translated into English by Sagar Lama. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Puchawa Selzong

Narrated by Dawa Sangbu, Chugyang Village, Tibet Autonomous Region, China. Collected and translated into English by Kelsang Chimee. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Three Good Princes

Narrated by Grandpa Drudi, Hor Xiang, Purang County, Tibet Autonomous Region, China. Collected and translated into English by Kelsang Chimee. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Seven Horses in a Forest

Bönpo legend. Collected and translated into English by Kelsang Chimee. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

Mother's Grief

Narrated by Trashi Pingtso from Purang County, Tibet Autonomous Region, China. Collected and translated into English by Kelsang Chimee. Translated into Hindi by Chandresha Pandey.

About ICIMOD

The International Centre for Integrated Mountain Development (ICIMOD) is a regional knowledge development and learning centre serving the eight member countries of the Hindu Kush Himalayas – Afghanistan, Bangladesh, Bhutan, China, India, Myanmar, Nepal, and Pakistan – and based in Kathmandu, Nepal.

Globalisation and climate change have an increasing influence on the stability of fragile mountain ecosystems and the livelihoods of mountain people.

ICIMOD aims to assist mountain people to understand these changes, adapt to them, and make the most of new opportunities, while addressing upstream-downstream issues. We support regional transboundary programmes through partnership with regional partner institutions, facilitate the exchange of experience, and serve as a regional knowledge hub. We strengthen networking among regional and global centres of excellence.

Overall, we are working to develop an economically and environmentally sound mountain ecosystem to improve the living standards of mountain populations and to sustain vital ecosystem services for the billions of people living downstream now, and for the future.

Within its Transboundary Landscapes Programme, Kailash Sacred Landscape Conservation and Development Initiative (KSLCDI) is a flagship transboundary collaborative initiative between China, India, and Nepal that has evolved through a participatory, iterative process among various local and national research and development institutions within these countries. The Kailash Sacred Landscape represents a diverse, multi-cultural, and fragile landscape. The programme aims to achieve long-term conservation of ecosystems, habitats, and biodiversity while encouraging sustainable development, enhancing the resilience of communities in the landscape, and safeguarding and adding value to the existing cultural linkages between local populations across boundaries. The Kailash Sacred Landscape Conservation and Development Initiative (KSLCDI) is supported by partner organizations: Department for International Development (DFID) - UK Aid, and Bundesministerium für Wirtschaftliche Zusammenarbeit und Entwicklung/Deutsche Gesellschaft für Internationale Zusammenarbeit (GIZ) GmbH.

ICIMOD



About India China Institute (ICI)

The India China Institute (ICI) is based at The New School, a university in New York City. Established in 2005, ICI supports research, teaching and discussion on India, China and the United States, with special focus on making comparisons and understanding interactions among the three countries as well as their joint impact on the rest of the world. Through fellowships, courses, public events, publications, and collaboration with a wide range of institutions around the world, ICI promotes academic and public understanding of issues of contemporary relevance. This publication is part of ICI's Sacred Landscapes and Sustainable Futures in the Himalaya Initiative, funded by the Henry Luce Foundation, The New School and ICIMOD. For three years (2014-2017), ICI worked with a team of scholars, policy makers and artists from India, China, Nepal and the United States to study relationships between religion and ecology, sacred landscapes, pilgrimage routes and ecological, economic and cultural sustainability and resilience in the Himalayas.

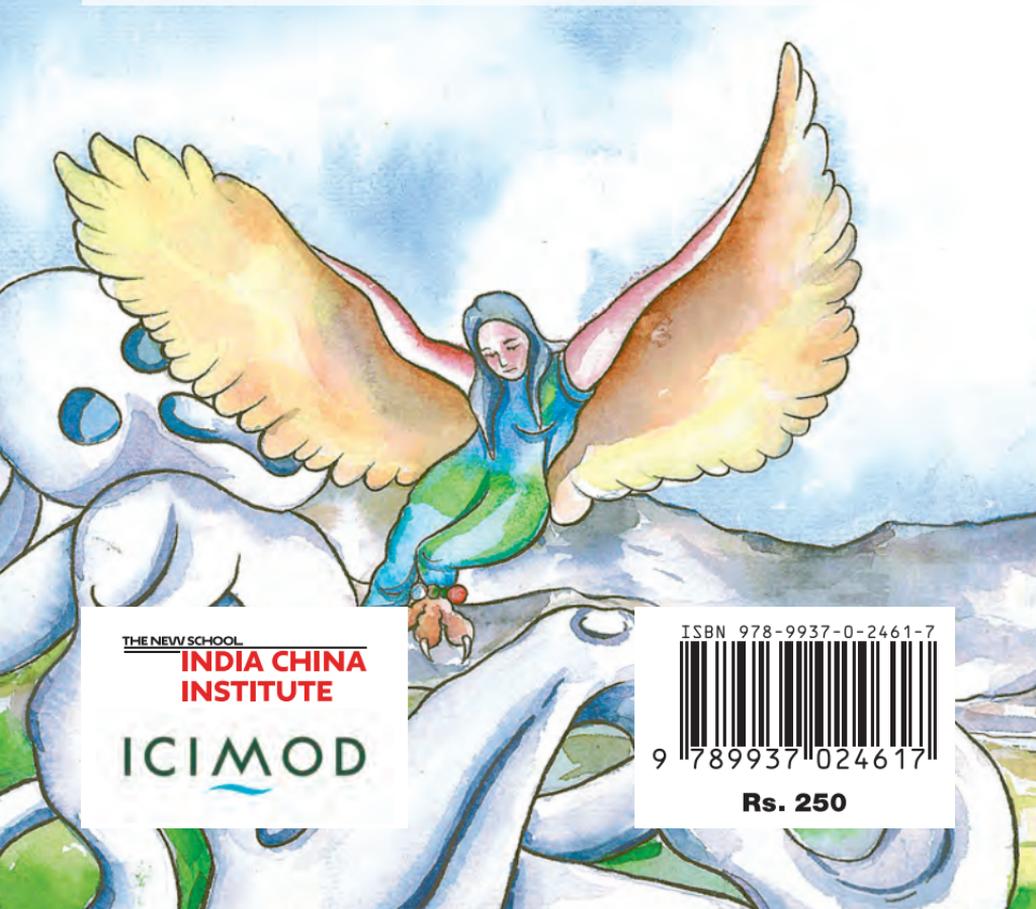
About The New School

The New School is a university founded in New York City in 1919 by a small group of prominent American intellectuals and educators, amongst them Charles Beard, John Dewey, James Harvey Robinson, and Thorstein Veblen, who were frustrated by the intellectual timidity of traditional colleges and envisioned a new kind of academic institution, an innovative college where faculty and students would be free to honestly and directly address the problems facing society. With over 135 undergraduate and graduate degree programs, The New School offers a more creatively inspired, rigorously relevant education than any other.



This collection of folktales explores the ways in which people from the Kailas region have understood their relation to their land and ancestors. For thousands of years, this region has been divided into different nations and religions, but we still share the same air and waters, and still worship the same lakes and mountains.

कैलास क्षेत्र के आसपास से संकलित की गईं इन लोक कथाओं से इस बात का पता चलता है कि वहां के लोग अपनी जमीन व पूर्वजों के संबंध को भली भांति समझते हैं। कैलास क्षेत्र के वाशिंग्टे विभिन्न राष्ट्र और धर्म में विभाजित हैं पर एक ही आबो हवा में जीते हैं और एक ही पर्वत व सरोवर की पूजा करते हैं।



THE NEW SCHOOL

**INDIA CHINA
INSTITUTE**

ICIMOD

ISBN 978-9937-0-2461-7



9 789937 024617

Rs. 250